नव संन्यास अंतर्राष्ट्रीय के बढ़ते चरण

स्वामी चैतन्य भारती संकीर्तन मंडली का पंजाब कार्यक्रम

भगवान श्री रजनीश की अमृत-वाणी को देश के कोने-कोने में परिव्याप्त करने हेतु और ध्यान-साधना तथा नगर-संकीर्तन के माध्यम से मानवीय चेतना को जाग्रत करने हेतु स्वामी चैतन्य भारती एवं मा आनन्द मधु सहित १५ संन्यासी साधक मित्रों की एक संकीर्तन-मंडली पिछले ८ माहों से निरन्तर राजस्थान, हैदराबाद, मध्यप्रदेश आदि राज्यों के विभिन्न स्थलों पर भ्रमण करती हुई अब पंजाब प्रदेश में पहुंच रही है। इस मंडली के माध्यम से अनेकों मुक्ति की राह में अग्रसर होने वाली मानवीय चेतनाओं को गति मिली है, तो दूसरी ओर संन्यासी मित्रों की साधना और तपश्चर्या में गहराई आई है। इन संन्यासी मित्रों की यात्रा पंजाब प्रदेश में नीचे लिखे कार्यक्रमों के अनुसार आपके नगर में होगी, अतः आशा है कि आप सब प्रेमी साधक मिलकर इन संन्यासी साधकों के कार्यक्रमों को शानदार रूप से सफल बनावेंगे :—

स्थान	दिनांक	संयोजक
फरीदकोट	३१ मई, १-२ जून	—
फिरोजपुर	४, ५, ६ जून	—
लुधियाना	९, १०, ११, १२, १३ जून	श्री कपिल मोहन, क्वालिटी आइसक्रीम कं०, १०, इंडस्ट्रियल एरीआ- 'ए', ओसवाल रोड, लुधियाना-३ (फोन : 4319)
फगवाड़ा	१५, १६, १७ जून	श्री पुरुषोत्तम खेती, आदर्श बाल विद्यालय, माडल टाउन, फगवाड़ा (पं.)

शेष कवर पृष्ठ ३ ▶

भगवान श्री रजनीश की सृजनात्मक
जीवन दृष्टि की मासिक
संकलन पत्रिका

मई १९७२

युक्रांद

वर्ष – ३ अंक – २१ : २२

मूल्य एक प्रति : १-०० रु.
„ वार्षिक : १२-०० रु.

युक्रांद

मई
१६७२

मानसेवी—

सम्पादक :
अरविन्द कुमार

उप-सम्पादक :
आलोक पाण्डे
'आकुल' राजेन्द्र

सौज० सम्पादक :
कनु शेठ

व्यवस्थापक :
स्वामी धर्म सरस्वती

अनुक्रमणिका

पृष्ठ :		
३.	"रजनीश को भूल जायं : भगवान को याद रखें"	प्रेषक : स्वामी योग चिन्मय
५.	हिप्पी (एक प्रवचन)	संकलन : मा योग क्रांति
३६.	पावन प्रवाह (एक प्रवचन का अंश)	संकलन : संतोष बी. गुप्ता
३७.	ध्यान के गुह्य आयाम (माथेरान साधना-शिविर : एक समीक्षा)	समीक्षाकार : 'आकुल' राजेन्द्र
३९.	Fragrance of Life	An Interview with Ma Veet Sandeh
४२.	ध्यान और संन्यास (प्रश्नोत्तर प्रवचन)	संकलन : स्वामी योग चिन्मय
५५.	माउण्ट आबू शिविर—३ (यात्रा संस्मरण)	स्वामी अगेह भारती

गीत-काव्य

३४.	गीत	साधु योग प्रीतम
३५.	संन्यास	के० के० शर्मा
५४.	मान नहीं कर पाते	'आकुल' राजेन्द्र

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक : अरविन्द कुमार, ७९०, राइट-टाउन, जबलपुर.
मुद्रण : अशेष प्रिंटर्स, ७८१, राइट-टाउन, जबलपुर. ☎ 2957

"रजनीश को भूल जायँ : भगवान भर याद रखें"

प्रेषक : *स्वामी योग चिन्मय*, बम्बई

[प्रस्तुत सामग्री गीता ज्ञान यज्ञ, सातवां अध्याय, क्रास मैदान, बम्बई में दिनांक २६ मई, १९७१ को दिये गये पांचवें प्रवचन का अंतिम अंश है। प्रतिदिन प्रवचन के बाद नव-संन्यासी भगवान श्री की उपस्थिति में कीर्तन करते थे। कीर्तन के बाद संन्यासी "भगवान श्री रजनीश की जय" कहा करते थे। दस पन्द्रह हजार श्रोताओं में से कुछ लोगों को यह जयकार व 'भगवान श्री' शब्द अच्छा नहीं लगा। इसके विरोध में पिछले दिनों अनेक पत्र आते रहे।

भगवान श्री ने उन पत्र प्रेषकों को प्रस्तुत संबोधन दिया है जो शायद सब लोगों को अन्तर्दृष्टि व स्पष्टता प्रदान करेगा। अत: प्रस्तुत है।—चिन्मय]

●

...संसार से, त्रिगुणात्मक प्रकृति से ऊपर उठने का द्वार कहां है? उससे ऊपर उठने का द्वार है प्रभु-स्मरण। कहीं से भी स्मरण मिलता हो तो परम सौभाग्य है। लेकिन हमारी तो बहुत अजीब हालतें हैं।

यहां कुछ संन्यासी मेरे नाम के सामने 'भगवान' लगाकर चिल्ला देते हैं। मैं चुप रह जाता हूं यह सोचकर कि आज नहीं कल वह मेरा नाम भी छोड़ देंगे और सिर्फ भगवान का नाम ही उच्चारित करेंगे। क्योंकि उसमें 'भगवान' शब्द झूठ नहीं है। उसमें मेरा नाम ही झूठ है। लेकिन मेरे पास चिट्ठियां आती हैं लोगों की कि आप लोगों को मना क्यों नहीं करते कि वे आपके नाम के आगे 'भगवान' लगाना बन्द करें। सिर्फ रजनीश कहें, आचार्य रजनीश कहें। 'भगवान' लगाना बन्द करें। उनकी चिट्ठियां आती हैं, वे समझते हैं कि वे बहुत होशियार लोग हैं। एक आदमी ने चिट्ठी नहीं भेजी कि वह कहता है कि रजनीश कहना बन्द कर दें। क्योंकि दोनों बातें एक साथ नहीं हो सकतीं।

जब तक रजनीश हूं तब तक भगवान होना मुश्किल, जब भगवान हो जाऊं तो रजनीश होना मुश्किल। ये दोनों कन्ट्राडिक्टरी (विरोधाभासी) हैं, लेकिन वे चिट्ठियां लिखने वाले होशियार लोग जो हैं—होशियार का मतलब कि जिनके पास युनिवर्सिटी का कागज का कोई टुकड़ा वगैरह है। मुझे कई चिट्ठियां आयीं कि फौरन बन्द करवाइये, यह क्या हो रहा है?

अक्ल के तो हम जैसे दुश्मन हैं, लट्ठ लेकर अक्ल के पीछे पड़े हुए हैं। चलो यही बहाना अच्छा, भगवान का नाम तो ले लेते हैं, खूंटी मेरी भी सही, तो क्या हर्जा ? खूंटी तुड़वा लेंगे, खूंटी कोई बड़ी चीज नहीं है। खूंटी कितनी देर बचेगी। खूंटी गिर ही जायेगी। लेकिन नहीं, जिनको यह तकलीफ होती है, उनकी तकलीफ का कारण है कि प्रभु-स्मरण जैसी चीज का उन्हें कोई पता नहीं है।

एक और मजे की बात है कि मैं सदा आपके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता रहा। तब किसी ने मुझे चिट्ठी लिखकर नहीं भेजी कि हमको आप परमात्मा क्यों कहते हैं। किसी आदमी ने चिट्ठी लिखकर नहीं भेजी मुझे कि आप हमको परमात्मा क्यों कहते हैं ? मैंने बहुत कह कर देख लिया, मैंने सोचा कि वह कुछ सुनायी नहीं पड़ता आपको, तो मैंने बन्द कर दिया। अब यह दूसरे छोर से इन लोगों ने शुरू कर दिया। यह छोर दूसरा है, बात वही है।

लेकिन अब उनको बड़ी बेचैनी हो रही है, उन्हीं सज्जनों को जिनको कि मैं निरन्तर कहता रहा कि आपके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। उन्होंने बड़े मजे से स्वीकार किया था। उनको अब बड़ी अड़चन हो रही है कि भगवान का नाम क्यों ले रहे हैं ? 'स्मरण' का हमें कोई पता नहीं है। अच्छा ही है, इस बहाने आपके कान में पड़ गया।

कल तो एक मित्र ने आकर कहा कि अब दोबारा इन्होंने आपको 'भगवान' कहा तो मैं सुनने नहीं आऊंगा। बहुत मजेदार बात है। वह मुझे सुनने आते हैं--कहते हैं, आपकी बात मुझे प्रीतिकर है, आपकी बात ठीक लगती है, लेकिन यह भर नहीं होना चाहिए— यह भगवान का नाम !

भगवान से ऐसी क्या दुश्मनी है। मुझसे तो दुश्मनी नहीं मालूम पड़ती उनकी, क्योंकि कहते हैं आपको सुनने में अच्छा लगता है, हम रोज आना चाहते हैं। भगवान से दुश्मनी मालूम पड़ती है। मत आयें, बिल्कुल न आयें और पिछली दफे जो आये हों उसको बिल्कुल भूल जायें, क्योंकि वह बेकार है, क्योंकि मैं जो बोल रहा हूं सिर्फ इसलिए बोल रहा हूं कि मुझमें ही नहीं, सब जगह, जहां भी कभी कुछ दिखायी पड़े—भगवान ही दिखाई पड़े— उसके लिए बोल रहा हूं। और मेरे सुनने का कोई प्रयोजन नहीं। बिल्कुल न आयें, क्या जरूरत है ? यहां कोई शाबाश कहकर, आपको फुसलाकर आपसे कोई दौड़ तो लगवानी नहीं है मुझे।

आज इतना ही लेकिन उठना मत, संन्यासी अब कीर्तन करेंगे। आप बैठे रहेंगे अपनी जगह। थोड़ा हम भगवान का स्मरण करेंगे।

संकलन : *मा योग क्रान्ति*

हिप्पी | व्यक्तित्व की परम स्वतंत्रता

जबलपुर विश्वविद्यालय में दिनांक २१ मार्च, १९६० के 'हिप्पी-विद्रोह' पर भगवान श्री द्वारा दिया गया एक प्रवचन।

हिप्पीवाद पर मैं कुछ कहूं ऐसा छात्रों ने अनुरोध किया है। इस संबंध में पहली बात: बर्नार्ड शा ने एक किताब लिखी है 'मैक्सिम्स फॉर ए रेव्हो-ल्यूशनरी' (क्रांतिकारी के लिए कुछ स्वर्ण सूत्र) और उसमें पहला स्वर्ण सूत्र बहुत अद्भुत लिखा है। ऐसे तो पहले स्वर्ण सूत्र पर भी बात पूरी हो जाती है। पहला स्वर्ण सूत्र लिखा है: "द फर्स्ट गोल्डन रूल इज देट देअर आर नो गोल्डन रूल्स" (पहला स्वर्ण नियम यही है कि कोई भी स्वर्ण नियम नहीं है)। हिप्पीवाद के सम्बन्ध में मैं जो पहली बात कहना चाहूंगा वह यह कि हिप्पी-वाद कोई वाद नहीं है, समस्त वादों का विरोध है। पहले इस 'वाद' को ठीक से समझ लेना जरूरी है।

हिप्पी-विद्रोह है--समस्त वादों का विद्रोह

५ हजार वर्षों में मनुष्य को जिस चीज ने सर्वाधिक पीड़ित किया है, वह है वाद, वह चाहे इस्लाम हो, चाहे ईसाइयत हो, चाहे हिन्दू हो, चाहे कम्यु-निज्म हो, सोशलिज्म हो, फासिज्म हो, गाँधी-इज्म हो। मनुष्य के जितने युद्ध हैं, जितना हिंसापात है, वह सब वादों के आसपास घटित हुआ है। वाद बदलते चले गये हैं, लेकिन नये वाद पुरानी बीमारियों की जगह ले लेते हैं और फिर आदमी वहीं का वहीं खड़ा हो जाता है। १९१७ में रूस में पुराने वाद समाप्त हुए, पुराने देवी देवता विदा हुए तो नये देवी देवता पैदा हो गये, नया धर्म

पैदा हो गया। क्रैमलिन अब मक्का और मदीना से कम नहीं है। वह नयी काशी है जहां पूजा के फूल चढ़ाने सारी दुनिया के कम्युनिस्ट इकट्ठे होते हैं। मूर्तियां हट गयीं, जीसस क्राइस्ट के चर्च मिट गये लेकिन लेनिन की मृत देह क्रैमलिन के चौराहे पर रख दी गयी है। उसकी भी पूजा चलती है।

वाद बदल जाता है लेकिन नया वाद उसकी जगह ले लेता है। **हिप्पी का समस्त वादों से विरोध है।** हिप्पी नाम से जिन युवकों को आज जाना जाता है उनकी धारणा ये है कि मनुष्य बिना वाद के जी सकता है। न किसी धर्म की जरूरत है न किसी शास्त्र की न किसी सिद्धांत की, न किसी विचार-संप्रदाय (आइडियालाजी) की, क्योंकि उनकी समझ यह है कि जितनी ज्यादा विचार की पकड़ होती है, जीवन उतना ही कम हो जाता है। हिप्पियों की इस बात से मैं भी अपनी सहमति जाहिर करना चाहता हूं। इन अर्थों में वे बहुत सांकेतिक हैं, सिम्बालिक हैं। और आने वाले भविष्य की एक सूचना देते हैं।

वादों के नीचे दबकर मनुष्य का मृत होना

आज से १०० वर्ष बाद दुनिया में जो मनुष्य होगा वह मनुष्य वादों के बाहर तो निश्चित ही चला जायेगा। वाद का इतना विरोध होने का कारण क्या है! हिप्पियों के मन में, उन युवकों के मन में जो समस्त वादों के विरोध में चले गये हैं, समस्त मंदिरों, समस्त चर्चों के विरोध में चले गये हैं, जाने का कारण है और कारण है इतने दिनों का निरन्तर का अनुभव। वह अनुभव यह है कि **जितना ही हम मनुष्य के ऊपर वाद थोपते हैं उतनी ही मनुष्य की आत्मा मर जाती है।** जितना बड़ा ढांचा होगा वाद का उतनी ही स्वतंत्रता समाप्त हो जाती है। वादग्रस्त व्यक्तित्व मरा हुआ व्यक्तित्व है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि हममें बहुत लोग मर तो बहुत पहले जाते हैं दफनाये बहुत बाद में जाते हैं। कोई ३० साल में मर जाता है और ७० साल में दफनाया जाता है। **हम उसी दिन अपनी स्वतंत्रता, अपना व्यक्तित्व अपनी आत्मा खो देते हैं जिस दिन कोई विचार का ढांचा हमें सब तरफ से पकड़ लेता है।** सींकचे तो दिखाई पड़ते हैं, लोहे के—कारागृह दिखाई पड़ते हैं, लोहे के; लेकिन विचार के कारागृह दिखाई नहीं पड़ते, और जो कारागृह जितना कम दिखाई पड़ता है उतना ही खतरनाक है।

मैं निपट आदमी हूं : एक बोध संस्मरण

अभी मैं एक नगर से विदा हुआ। बहुत से मित्र छोड़ने आये थे। जिस कम्पार्टमेंट में मैं था उसमें एक और साथी थे। उन्होंने देखा बहुत मित्र छोड़ने

आये हैं। तो जैसे ही मैं अन्दर प्रविष्ट हुआ, गाड़ी चली, उन्होंने जल्दी से मेरे पैर छुए और कहा कि महात्माजी, नमस्कार करता हूं। बड़ा आनन्द हुआ कि आप मेरे साथ होंगे। मैंने उनसे कहा कि ठीक से पता लगा लेना था कि मैं महात्मा हूं या नहीं। आपने तो जल्दी पैर छू लिए। अब अगर मैं महात्मा सिद्ध न हुआ, तो पैर छूने को वापस कैसे लेंगे ? उन्होंने कहा, नहीं-नहीं, ऐसा कैसे हो सकता है, आपके कपड़े कहते हैं। मैंने कहा, अगर कपडों से कोई महात्मा होता, तो तब तो पृथ्वी सारी की सारी कभी की महात्मा हो गयी होती। उन्होंने कहा कि नहीं इतने लोग छोड़ने आये थे। तो मैंने कहा कि किराये के आदमी इतने ज्यादा लोगों को छोड़ने आते हैं कि उसका कोई मतलब नहीं रहा है। वे कहने लगे कम से कम आप हिन्दू तो हैं। उन्होंने सोचा कि न सही कोई महात्मा हो, हिन्दू हुआ तो भी चलेगा। कोई ज्यादा गुनाह नहीं हुआ, पैर छू लिये। तो मैंने कहा, नहीं, हिन्दू भी नहीं हूं। तो उन्होंने कहा आप आदमी कैसे हैं ? कुछ तो होंगे, मुसलमान होंगे, ईसाई होंगे ? मैंने उनसे पूछा कि **क्या मेरे सिर्फ आदमी होने से आपको कोई एतराज है ?** क्या सिर्फ आदमी होकर मैं नहीं हो सकता हूं ? मुझे कुछ और होना ही पड़ेगा ?

उनकी बेचैनी देखने जैसी थी। कंडक्टर को बुलाकर वे दूसरे कंपार्टमेंट में अपना सामान ले गये। मैं थोड़ी देर बाद उनके पास गया और मैंने उनको कहा, आप तो कहते थे, सत्संग होगा, बड़ा आनन्द हुआ। आप तो चले गये। क्या एक आदमी के साथ सफर करना उचित नहीं मालूम पड़ा। हिन्दू के साथ सफर हो सकता था। आदमी के साथ सफर बहुत मुश्किल है !

बगावत––निपट आदमी की तरह जीने के लिए

आज पश्चिम में जिन युवकों ने हिप्पियों का नाम ले रखा है उनकी पहली बगावत यह है कि वे कहते हैं कि हम सीधे आदमी की तरह जियेंगे। न हम हिन्दू होंगे, न हम कम्युनिस्ट होंगे, न हम सोशलिस्ट होंगे, न हम ईसाई होंगे, **हम सीधे निपट आदमी की तरह जीने की कोशिश करेंगे।** निपट आदमी की तरह जीने की जो भी कोशिश है, वह मुझे तो बहुत प्रीतिकर है। और मेरी समझ में जीसस भी निपट आदमी की तरह जिये—बुद्ध भी, महावीर भी। इसलिए अभी एक वक्तव्य में जब मैंने कहा कि **जीसस, बुद्ध, महावीर और कृष्ण—इन सबको हिप्पियों के लम्बे इतिहास में जोड़ लिया जाना चाहिए,** तो कुछ लोगों को बहुत हैरानी हुई।

हिप्पी नाम तो नया है, लेकिन घटना बहुत पुरानी है। मनुष्य के इतिहास में आदमी ने कई बार निपट आदमी की तरह जीने की कोशिश की

है। निपट आदमी की तरह जीने में बहुत से सवाल हैं। धर्म नहीं, चर्च नहीं, समाज नहीं—अन्ततः देश भी नहीं, क्योंकि देश, राष्ट्र सब उपद्रव हैं, सब बीमारियां हैं। कल तक पाकिस्तान की भूमि हमारी मातृभूमि हुआ करती थी। अब वह हमारी शत्रु की मातृभूमि है। जमीन वही है, कहीं टूटी नहीं, कहीं दरार नहीं पड़ी।

मैंने सुना है, एक पागलखाना था हिन्दुस्तान के बंटवारे के समय हिन्दुस्तान पाकिस्तान की सीमा पर। अब यह भी सवाल उठा कि इस पागलखाने को कहां जाने दें—हिन्दुस्तान में कि पाकिस्तान में? कोई राजनीतिज्ञ उत्सुक न था कि वह पागलखाना कहीं भी चला जाय। तो पागलों से ही पूछा अधिकारियों ने कि तुम कहां जाना चाहते हो, हिन्दुस्तान या पाकिस्तान में? तो उन पागलों ने कहा कि हम तो जहाँ हैं वहां बड़े आनन्द में हैं। हमें कहीं जाने की कोई इच्छा नहीं है। पर उन्होंने कहा कि जाना तो पड़ेगा ही, यह इच्छा का सवाल नहीं है और तुम घबड़ाओ मत। तुम हिन्दुस्तान में चाहो हिन्दुस्तान में चले जाओ, पाकिस्तान में चाहो तो पाकिस्तान में चले जाओ। तुम जहां हो वहीं रहोगे, यहां से हटना न पड़ेगा। तब तो वे पागल बहुत हंसने लगे। उन्होंने कहा, हम तो सोचते थे कि हम ही पागल हैं, लेकिन वे अधिकारी और भी पागल मालूम होते हैं, क्योंकि वे कहते हैं कि जाना कहीं न पड़ेगा और पूछते हैं, जाना कहां चाहते हो? उन पागलों ने कहा, जब जाना ही नहीं पड़ेगा तो जाना चाहने का सवाल क्या है? उन पागलों को समझाना बहुत मुश्किल हुआ। आखिर आधा पागलखाना बीच से दीवार उठाकर पाकिस्तान में चला गया, आधा हिन्दुस्तान में चला आया। मैंने सुना है कि अभी भी वे पागल एक दूसरे की दीवार पर चढ़ जाते हैं और आपस में सोचते हैं कि बड़ी अजीब बात है, हम वहीं के वहीं है, लेकिन तुम पाकिस्तान में चले गए और हम हिन्दुस्तान में चले गये।

ये पागल हमसे कम पागल मालूम होते हैं। हमने जमीन को बांटा है, आदमी को बांटा है। हिप्पी कह रहा है: हम बांटेंगे नहीं, हम निपट बिना बंटे हुए आदमी की तरह जीना चाहते हैं और वाद बांटते हैं। बांटने की सबसे सुविधापूर्ण तरकीब वाद है, इज्म है। इसलिए हिप्पी कहते हैं कि हम किसी इज्म में नहीं हैं। ऊब चुके तुम्हारे वादों से, तुम्हारे धर्मों से। हमें निपट आदमी की तरह छोड़ दो—हम जैसे हैं वैसे जीना चाहते हैं। यह तो पहला सूत्र है। इसलिए मैंने कहा यह बात पहले समझ लेनी जरूरी है। हिप्पीइज्म जैसी चीज नहीं है, हिप्पीज हैं। हिप्पीवाद नहीं है, हिप्पी जरूर हैं।

सहज जीवन——न प्रवंचना, न पाखण्ड

दूसरी बात ध्यान में लेने जैसी है और वह यह है कि **हिप्पियों की यह धारणा है कि न केवल निपट आदमी की तरह जियें; बल्कि सहज आदमी की तरह जियें।** हजारों साल की सभ्यता ने आदमी को असहज बनाया है, जैसा वह नहीं है वैसा बनाया है। हजारों साल की सभ्यता, संस्कार, व्यवस्था ने आदमी कृत्रिम और झूठा बनाने की कोशिश की है। उसके हजार चेहरे बना दिये हैं। मैंने सुना है कि अगर एक कमरे में मैं और आप दो जन मिलें तो वहां दो जन नहीं होंगे, वहां कम से कम ६ जन होंगे। एक मैं जैसा मैं हूं, एक मैं जैसा कि मैं सोचता हूं कि मैं हूं, और एक मैं जैसा कि आप मुझे समझते हैं कि मैं हूं। और तीन आप और तीन मैं, उस कमरे में जहां दो आदमी मिलते हैं, कम-से-कम ६ आदमी मिलते हैं। ६ बहुत कम से कम (मिनिमम) है—हजार मिल सकते हैं; क्योंकि हमारे हजार चेहरे हैं, मुखौटे हैं।

हर आदमी कुछ है और कुछ दिख रहा है। कुछ है, कुछ बन रहा है और कुछ और ही दिखाई पड़ रहा है। और फिर न मालूम कितने चेहरे—जैसे दर्पण के आगे दर्पण और दर्पण के आगे दर्पण और एक दूसरे के प्रतिबिम्ब और हजार-हजार प्रतिबिम्ब हो गये हैं। **इन प्रतिबिम्बों की भीड़ में पता लगाना ही मुश्किल है कि कौन हैं आप**— तय करना ही मुश्किल है कि कौन हैं आप। पत्नी के सामने आपका चेहरा दूसरा होता है। बेटे के सामने दूसरा हो जाता है। नौकर के सामने एक होता है, मालिक के सामने दूसरा हो जाता है। जब आप मालिक के सामने खड़े होते हैं, तो जो पूंछ आपके पास नहीं है वह हिलती रहती है। और जब आप नौकर के पास खड़े होते हैं तब जो पूंछ उसके पास नहीं है आप गौर से देखते रहते हैं कि वह हिला रहा है कि नहीं हिला रहा है।

हिप्पियों की धारणा मुझे प्रीतिकर मालूम पड़ती है। वे कहते हैं कि हम सहज आदमियों की तरह जियेंगे, जैसे हम हैं। धोखा न देंगे, प्रवंचना, पाखंड (डिसेप्शन) खड़ा न करेंगे। ठीक है, तकलीफ होगी तो तकलीफ झेलेंगे, लेकिन जैसे हम हैं, वैसे ही रहेंगे। अगर हिप्पी को लगता है कि वह किसी से कहे कि मुझे आप पर क्रोध आ रहा है और गाली देने का मन होता है, तो वह आपसे आकर कहेगा पास में बैठकर कि मुझे आप पर बहुत क्रोध आ रहा है और मैं आपको दो गाली देना चाहता हूं। मैं समझता हूं कि बड़ा मानवीय गुण है। और वह क्षमा मांगने नहीं आयेगा पीछे जब तक उसे न लगे, क्योंकि वह कहेगा गाली देने का मेरा मन था। मैंने गाली दी और अब

जो भी फल हो उसे लेने के लिए तैयार हूं। लेकिन गाली भीतर, ऊपर मुस्कुराहट इस बात को वह इन्कार कर रहा है। लेकिन हमारी स्थिति यह है कि भीतर कुछ है, बाहर कुछ। भीतर एक नर्क छिपाये हुए हैं हम, बाहर हम कुछ और हो गये हैं। हर आदमी एक जीता जागता झूठ है।

हिप्पी का दूसरा सूत्र यह है कि हम जैसे हैं वैसे हैं। हम कुछ भी रुकावट न करेंगे, छिपावट न करेंगे। मेरे एक मित्र हिप्पियों के एक छोटे से गांव में जाकर कुछ दिन तक रहे, तो वे मुझसे बोले कि बहुत बेचैनी होती है वहां, क्योंकि वहां सारे मुखौटे उखड़ जाते हैं। वहां बजाय एक युवक एक युवती के पास आकर कविताएं कहे, प्रेम की और बातें करे हजार तरह की, वह उससे सीधा ही आकर निवेदन कर देगा कि मैं आपको भोगना चाहता हूं। वह कहेगा कि इतने सारे जाल के पीछे इरादा तो वही है, तो उस इरादे को हम सीधा कह देते हैं। उस इरादे के लिए इतने जाल बनाने की कोई जरूरत नहीं है। वह कह सकता है एक लड़की को आकर कि मैं तुम्हारे साथ बिस्तर पर सोना चाहता हूं। बहुत घबराने वाली बात लगेगी; लेकिन सारी बातचीत सारी कविता और सारे संगीत और सारी प्रेम चर्चा के बाद यही घटना अगर घटने वाली है तो हिप्पी कहता है कि इसे सीधा ही निवेदन कर देना उचित है। किसी को धोखा तो न हो, वह लड़की अगर न चाहती हो सोना, तो कह तो सकती है कि क्षमा करो।

झूठी सभ्यता के जाल का इन्कार

एक जाल सभ्यता ने खड़ा किया है, जिसने आदमी को बिल्कुल ही झूठी इकाई बना दिया है। अब एक पति है, वह अपनी पत्नी से रोज कहे जा रहा है कि मैं तुम्हें प्रेम करता हूं और भीतर जानता है कि यह मैं क्यों कह रहा हूं। एक पत्नी है, वह अपने पति से रोज कहे जा रही है कि मैं तुम्हारे बिना एक क्षण नहीं जी सकती और उसी पति के साथ एक क्षण जीना मुश्किल हुआ जा रहा है। बाप बेटे से कुछ कह रहा है। बाप बेटे से कह रहा है कि मैं तुम्हें इसलिए पढ़ा रहा हूं कि मैं तुझे बहुत प्रेम करता हूं। और वह पढ़ा इसलिए रहा है कि बाप अपढ़ रह गया है। और उसके अहंकार की चोट घाव बन गई है। वह अपने बेटे को पढ़ाकर अपने अहंकार की पूर्ति कर लेना चाहता है। बेटे के कंधे पर रखकर अहंकार की बन्दूक चलाना चाह रहा है, लेकिन वह कह यह रहा है कि मैं तुझे प्रेम करता हूं इसलिए तुझे पढ़ा रहा हूं। बाप नहीं पहुंच पाया मिनिस्ट्री तक, वह बेटे को पहुंचाना चाहता है। पर वह कहता है, बेटे को मैं बहुत प्रेम करता हूं इसलिए ... लेकिन उसे पता नहीं है

कि बेटे को मिनिस्ट्री तक पहुंचाना बेटे को नर्क तक पहुंचा देना है। अगर प्रेम है तो कम से कम बाप एक बात तो न चाहेगा कि बेटा राजनीतिज्ञ हो जाय। सब माताएं कह रही हैं कि वे बेटों से प्रेम करती हैं; लेकिन प्रेम का कुछ पता नहीं। सब बाप कह रहे हैं कि बेटों से प्रेम करते हैं। सब पति कह रहे हैं, सब पत्नियां कह रही हैं, सारी पृथ्वी पर साढ़े तीन अरब आदमी एक दूसरे से कह रहे हैं कि हम तुम्हें प्रेम करते हैं और हर दस वर्ष में युद्ध की जरूरत पड़ती है, जिसमें दस-पांच करोड़ लोगों को मारना पड़ता है। और रोज कहीं वियतनाम, कहीं कोरिया, कहीं कश्मीर में युद्ध जारी है।

धोखा प्रेम का--एक तथ्य

सारी दुनिया प्रेम कर रही है, लेकिन प्रेम का कोई विस्फोट कभी नहीं होता है। सारी दुनिया प्रेम कर रही है और जब भी विस्फोट होता है, तो घृणा का होता है। हिप्पी कहता है, जरूर हमारा प्रेम कहीं धोखे का है। कर रहे हैं घृणा, कह रहे हैं प्रेम। मैं एक स्त्री को कह रहा हूं कि मैं तुझे प्रेम करता हूं और मेरी स्त्री जरा पड़ोस के आदमी की तरफ गौर से देख ले तो सारा प्रेम विदा हो गया और तलवार खिंच गई। कैसा प्रेम है! अगर मैं इस स्त्री को प्रेम करता हूं तो ईर्ष्यालु नहीं हो सकता। प्रेम में ईर्ष्या की कहां जगह है? लेकिन जिनको भी हम प्रेम करते हैं वे सिर्फ एक दूसरे के पहरेदार बन जाते हैं और कुछ भी नहीं, और एक दूसरे के लिए ईर्ष्या का आधार खोज लेते हैं। जलते हैं, जलाते हैं, परेशान करते हैं। हिप्पी यह कह रहा है कि बहुत हो चुकी यह बेईमानी। अब हम तो जैसे हैं, वैसे हैं। अगर प्रेम है तो कह देंगे कि प्रेम है और जिस दिन प्रेम चुक जायगा उस दिन निवेदन कर देंगे कि प्रेम चुक गया, अब झूठी बातों में पड़ने की कोई जरूरत नहीं है, मैं जाता हूं। लेकिन पुराने प्रेम की धारणा कहती है कि प्रेम होता है तो फिर कभी नहीं मिटता, शाश्वत होता है। हिप्पी कहता है, होता होगा। अगर होगा तो कह दूंगा कि शाश्वत है, टिका है। नहीं होगा तो कह दूंगा कि नहीं है।

एक बात है जो सभ्यता ने विकसित किया था, उस जाल में आदमी की गर्दन ऐसे फंस गयी है जैसे फांसी लग गयी हो। उस जाल से बगावत है हिप्पी की। **दूसरा सूत्र है हिप्पी का--सहज जीवन**—जैसे हैं, हैं। लेकिन सहज होना बहुत कठिन बात है, क्योंकि हम इतने असहज हो गये हैं और इतनी हमने यात्रा कर ली है अभिनय की कि वहां लौट जाना, जहां हमारी सच्चाई प्रकट हो जाये, बहुत मुश्किल है।

मुक्त जीवन की ओर—डॉक्टर पर्ल्स के प्रयोग

डॉक्टर पर्ल्स एक मनोवैज्ञानिक है जो हिप्पियों का गुरु कहा जा सकता है। एक महिला गई थी वहां। मैंने उससे कहा था कि जरूर उस पहाड़ी पर हो आना, २–४ दिन रुक आना। तो जब वह पर्ल्स के पास गई और वहां का सारा हाल देखा वह तो बहुत घबड़ा गई, बहुत घबड़ा गई, क्योंकि वहां सहज जीवन सूत्र है। सारे लोग बैठे हैं और एक आदमी नंगा चला आयेगा हॉल में और आकर बैठ जायेगा। अगर उसको नंगा होना ठीक लग रहा है तो यह उसकी मर्जी है। इसमें किसी को कुछ लेना देना नहीं है। न कोई हाल में चीखेगा, न कोई चिल्लायेगा न कोई गौर से देखेगा। उसे जैसा ठीक लग रहा है, उसे वैसा करने देना है। और जो लोग पर्ल्स के पास महीने भर रह आते हैं उनकी जिन्दगी में कुछ नये फूल खिल जाते हैं। क्योंकि पहली दफा वे हल्के, पक्षियों की तरह जी पाते हैं— पौधों की तरह, या जैसे आकाश में कभी चील को उड़ते देखा हो जो पंख नहीं चलाती, पंख भी बन्द हो जाते हैं, बस हवा पर तिरती रहती है। उस पहाड़ी पर पर्ल्स के पास भी व्यक्ति हवा में तिर रहे हैं। एक आदमी बाहर नाच रहा है तो नाच रहा है। कोई गीत गा रहा है तो गीत गा रहा है। कोई रो रहा है तो रो रहा है। कोई रुकावट नहीं है। लेकिन हमने तो आदमी को सब तरह से रोक रखा है। बच्चे को निर्देश देने से शुरू हो जाती है कहानी।

निषेध की हमारी गलत शिक्षा

हमारी सारी शिक्षा 'डू नॉट', 'मत करो' से शुरू होती है और हर बच्चे के दिमाग में हम ज्यादा से ज्यादा 'यह मत करो', 'यह मत करो', थोपते चले जाते हैं अंततः करने की सारी क्षमता, सृजन की सारी क्षमता 'न-करने' के इस जाल में लुप्त हो जाती है। या तो वह आदमी चोरी से करना शुरू कर देता है, जो-जो हमने रोका था कि मत करो और या फिर भीतर परेशानी में पड़ जाता है। दो ही रास्ते हैं, या तो पाखंडी हो जाये, या पागल हो जाय। अगर भीतर लड़ा और अगर 'सिंसियर" होगा, ईमानदार होगा तो पागल हो जायेगा। अगर होशियार हुआ, चालाक हुआ, 'कनिंग' हुआ तो पाखंडी हो जायेगा। एक दरवाजा मकान के पीछे से बना लेगा जहां से 'करने' की दुनिया रहेगी, एक दरवाजा बाहर का रहेगा जहां 'न-करने' के सारे "टेन कमांडमेंट्स" (दस परम आदेश) लिखे हुए हैं। वहां वह सदा ऐसा खड़ा होगा कि यह मैं नहीं करता हूं और करने की अलग दुनिया बना लेगा। मनुष्य को खंडित, सीजो-फ्रेनिक बनाने में, मनुष्य के मन को खंड-खंड करने में सभ्यता की 'न-करने' की शिक्षा ने बड़ा काम किया है।

झूठे अभिनय से दूर : नग्न तथ्यों के साथ जीना

हिप्पी यह कह रहा है कि जो हमें करना है वह हम करेंगे। और उसके लिए जो भी हमें भोगना है, हम भोग लेंगे । लेकिन एक बात हम न करेंगे कि करें कुछ, और दिखायें कुछ। यह बड़ी गहरी बगावत है। हालांकि सदा से साधु-संतों ने कहा था बाहर और भीतर एक जैसे होना चाहिए, तब उनका मतलब है बाहर जैसे हो वैसे ही भीतर होना चाहिए। हिप्पी जब कहता है कि बाहर भीतर एक होना चाहिए, तो वह कहता है कि भीतर जैसे हो वैसे ही बाहर भी होना चाहिए। इन दोनों में फर्क है।

साधु-संत जब कहते हैं कि बाहर जैसे हो वैसे भीतर होना चाहिए, तो वे कहते हैं कि भीतर का दरवाजा बन्द करो। हिप्पी कहता है बाहर भीतर एक होना चाहिए, तो वह कहता है, बाहर जो दस निषेध आज्ञाओं, 'टेन कमांडमेंट्स' की तख्ती लगी है, उसको उखाड़कर फेंक दो। और जैसे भी हो वैसे हो जाओ—अगर चोर हो तो चोर, अगर बेईमान हो तो बेईमान, क्रोधी हो तो क्रोधी। बड़ा खतरा तो यह है कि क्रोधी अभिनय कर रहा है अक्रोध का, हिंसक अभिनय कर रहा है अहिंसक का, कामी अभिनय कर रहा है ब्रह्मचर्य का और पुरानी सारी संस्कृतियां अभिनय को बड़ी कीमत देती हैं और कुशल अभिनेता की बड़ी पूजा करती हैं।

हिप्पी कह रहा है, हम अभिनय की पूजा नहीं करते हम जीवन के पूजक हैं। हिप्पी कह रहा है कि झूठे ब्रह्मचर्य से सच्चा यौन भी अर्थपूर्ण है। झूठे ब्रह्मचर्य में भी वह सुगंध नहीं है जो सच्चे यौन में हो सकती है। सच्चे ब्रह्मचर्य की तो बात ही दूसरी है। उसकी सुगंध का हमें पता क्या है? लेकिन सच्चा यौन न हो तो सच्चे ब्रह्मचर्य की कोई संभावना ही नहीं है। अभी हिप्पी यह नहीं कह रहे हैं, लेकिन शीघ्र ही जानेंगे तो कहेंगे। अभी तो वे यही कह रहे हैं कि जो जैसा है वैसा प्रगट करेंगे। हम अगर पशु हैं तो स्वीकृत है कि हम पशु हैं और हम पशु की भांति ही जियेंगे।

तीसरी बात, जब मैं सोचता हूं तो मुझे लगता है कि अगर खोज की जाय तो ईसाइयों की कहानी के आदम और ईव हिप्पियों के आदि पुरुष कहे जाने चाहिये। क्योंकि आदम और ईव को ईश्वर ने कहा था कि तुम ज्ञान के वृक्ष का फल मत चखना। उन्होंने बगावत कर दी और जिस वृक्ष का फल नहीं चखने को कहा था, उसी का फल चख लिया और वे ईडन के बगीचे से बहिष्कृत कर दिये गये।

इन्कार का साहस और व्यक्तित्व का जन्म

तीसरा सूत्र है हिप्पी का : विद्रोह (इन्कार का साहस) । एक तो कन्फर्मिस्ट की जिन्दगी है, 'हां-हुजूर' की, 'यस सर' की । वह जो भी कह रहा है, 'हां कह रहा है । वह सदा 'हां–हुजूर' कहने के लिए तैयार है । उसने चाहे बात भी ठीक से नहीं सुनी है, लेकिन 'हां-हुजूर' कहे जा रहा है । उसे पता भी नहीं कि वह किस चीज में 'हां' भर रहा है, लेकिन वह 'हां' भरे चला जा रहा है । एक गुर, एक सीक्रेट उसे पता चल गया है कि इस जिन्दगी में जीना हो तो सब चीज में 'हां' कहे चले जाओ ।

हिप्पी कह रहा है, जब तक हम समाज की हर चीजों में 'हां' कह रहे हैं, तब तक व्यक्तित्व का जन्म नहीं होता । व्यक्तित्व का जन्म होता है 'नो सेइंग' से, 'न-कहना' शुरू करने से । असल में मनुष्य की आत्मा ही तब पैदा होती है जब कोई आदमी 'नो' (नहीं) कहने की हिम्मत जुटा लेता है । जब कोई कह सकता है 'नहीं' चाहे दांव पर पूरी जिन्दगी लग जाती हो । और जब एक बार आदमी 'नहीं' कहना शुरू कर दे, 'नहीं' कहना सीख ले तब पहली दफा उसके भीतर इस 'नहीं' कहने के कारण, 'डिनायल' के कारण व्यक्तित्व का जन्म शुरू होता है । यह 'न' की जो रेखा है उसको व्यक्ति बनाती है । 'हां' की रेखा उसको समूह का अंग बना देती है। इसलिए समूह सदा से आज्ञाकारिता पर जोर देता है ।

बाप अपने 'गोबर-गणेश' बेटे को कहेगा कि आज्ञाकारी है । क्योंकि 'गोबर-गणेश' बेटे से 'न' निकलती ही नहीं । असल में 'न' निकलने के लिए थोड़ी बुद्धि चाहिए । 'हां' निकलने के लिए बुद्धि की कोई जरूरत नहीं है । 'हां' तो कम्प्यूटराइज्ड है, वह तो बुद्धि जितनी कम होगी उतनी जल्दी निकलता है । 'न' तो सोच-विचार मांगता है । 'न' तो तर्क (आर्गुमेंट) मांगता है। 'न' जब कहेंगे तो पच्चीस बार सोचना पड़ता है । क्योंकि 'न' कहने पर बात खत्म नहीं होती, शुरू होती है । 'हां' कहने पर बात खत्म हो जाती है, शुरू नहीं होती । **बुद्धिमान बेटा होगा तो बाप को ठीक नहीं लगेगा, क्योंकि बुद्धिमान बेटा बहुत बार बाप को भी निर्बुद्धि सिद्ध कर देगा ।** बहुत क्षणों में बाप को भी लगेगा कि मैं भी निर्बुद्धि मालूम पड़ रहा हूं । बड़ी चोट है, अहंकार को । वह कठिनाई में डाल देगी । **इसलिए हजारों साल से बाप, पुरानी पीढ़ी, समाज 'हां' कहने की आदत डलवा रहा है ।** उसको वह अनुशासन कहे, आज्ञाकारिता कहे और कुछ नाम दे, लेकिन प्रयोजन एक है और वह यह है कि विद्रोह नहीं होना चाहिए, बगावती चित्त नहीं होना चाहिये ।

बगावती चित्त और बगावती आत्मा

हिप्पियों का तीसरा सूत्र है कि अगर चित्त ही चाहिए हो तो सिर्फ बगावती ही हो सकता है। अगर चित्त ही न चाहिये हो तब बात दूसरी। अगर आत्मा चाहिये हो तो वह 'रिबैलियस' ही होगी। अगर आत्मा ही न चाहिए हो तो बात दूसरी। कन्फर्मिस्ट के पास कोई आत्मा नहीं होती। यह ऐसे ही है, जैसे एक पत्थर पड़ा है सड़क के किनारे। सड़क के किनारे पड़ा हुआ पत्थर मूर्ति नहीं बनता है, मूर्ति तो तब बनता है जब छैनी और हथौड़ी उस पर चोट करती और काटती है। जब कोई आदमी 'न' कहता है और बगावत करता है, तो सारे प्राणों पर छैनी और हथौड़ियां पड़ने लगती हैं। सब तरफ से मूर्ति निखरनी शुरू होती है। लेकिन जब कोई पत्थर कह देता है 'हां', तो छैनी हथौड़ी नहीं होती वहां पैदा। वह फिर पत्थर ही रह जाता है सड़क के किनारे पड़ा हुआ। लेकिन समस्त सत्ताधिकारियों को चाहे वे पिता हों, चाहे शिक्षक हों, चाहे मां-बाप हों, चाहे बड़े भाई हों, चाहे राज-नेता हों—समस्त सत्ताधिकारियों को 'हां-हुजूरों' की जमात चाहिए।

विद्रोही संन्यासी के कुछ लक्षण--हिप्पी में

हिप्पी कहते हैं, इससे हम इन्कार करेंगे। हमें जो ठीक लगेगा वैसा हम जियेंगे। निश्चित ही तकलीफ है और इसलिए हिप्पी भी एक तरह का संन्यासी है। असल में संन्यासी कभी एक दिन एक तरह का हिप्पी ही था। उसने भी इंकार किया था; अ-नागरिक था, समाज छोड़कर भाग रहा था। जैसे महा-वीर नग्न खड़े हो गए। महावीर जिस दिन बिहार में नग्न खड़े हुए होंगे उस दिन मैं नहीं समझता कि पुरानी जमात ने स्वीकार किया हो इस आदमी को। यहां तक बात चली कि अब महावीर को मानने वालों के दो हिस्से हैं। एक तो कहता है कि वे वस्त्र पहिनते थे, लेकिन वे अदृश्य वस्त्र थे, दिखाई नहीं पड़ते थे। यह पुराना कन्फर्मिस्ट जो होगा, उसने आखिर महावीर को भी वस्त्र पहना दिये, लेकिन ऐसे वस्त्र जो दिखाई नहीं पड़ते। इसलिए कुछ लोगों को भूल हुई कि वे नंगे थे, वे नंगे नहीं थे, वस्त्र पहिनते थे।

परम विद्रोही कृष्ण--एक महाहिप्पी

जीसस, बुद्ध या महावीर जैसे लोग सभी बगावती हैं। असल में मनुष्य जाति के इतिहास में जिनके नाम भी गौरव से लिए जा सकें, वे सब बगावती हैं। और **कृष्ण से बड़ा महाहिप्पी खोजना तो असम्भव ही है।** इसलिए कृष्ण को मानने वाला कृष्ण को उनके व्यक्तित्व के खंड-खंड में स्वीकार करता है। अगर सूरदास के पास जायें, तो वे कृष्ण को बच्चे से ऊपर बढ़ने ही नहीं देते।

क्योंकि बच्चे के ऊपर बढ़कर वह जो उपद्रव करेगा वह सूरदास की पकड़ के बाहर है। तो बालकृष्ण को ही वे स्वीकार कर सकते हैं, छोटे बच्चे को। तब उसकी चोरी भी निर्दोष हो जाती है। लेकिन सूरदास सोच ही नहीं सकते कि उनका कृष्ण रास रचा रहा है, गोपियों से प्रेम कर रहा है और नहाती हुई स्त्रियों के कपड़े लेकर वृक्ष पर चढ़ गया है। फिर पुराना कन्फर्मिस्ट जब आयेगा व्याख्या करने तो वह कहेगा, ये गोपियां नहीं हैं। गोपी का मतलब होता है इंद्रियां, तो इंद्रियों को निरावरण करके वे वृक्ष पर चढ़ गए हैं, किसी स्त्री को निरावरण करके नहीं।

विद्रोह का परिणाम----सूली जीसस को

कन्फर्मिस्ट बार-बार लौटकर विद्रोही को भी अपने कैम्प में खड़ा कर लेता है। इसलिए जीसस को सूली देनी पड़ती है। लेकिन दो-चार सौ वर्ष बाद जीसस भी उसी कतार में सम्मिलित हो जाते हैं। अब कभी हमने नहीं सोचा कि जीसस को सूली देने का कारण क्या था ? जीसस को सूली देने के कारण बड़े अजीब थे। बड़े से बड़े कारणों में से एक तो यह था कि वे गैर-पारंपरिक, नान-कन्फर्मिस्ट थे। वे अंध-स्वीकारी नहीं थे। वे इंकार करने वाले व्यक्ति थे। लोगों ने कहा वह (मेग्दलीन) वेश्या है उसके घर में मत ठहरो। तो जीसस ने कहा, मैं भी अगर वेश्या के घर में नहीं ठहरूंगा तो फिर कौन ठहरेगा ? इसलिए जानकर हैरानी होगी कि जिस दिन जीसस को सूली हुई उस सूली के पास न तो जीसस का कोई अनुयायी था, न कोई शिष्य था। उस सूली के पास जीसस के बुद्धिमान शिष्यों में से कोई भी नहीं था। जीसस के पास सिर्फ दो औरतें थीं। एक तो वही वेश्या थी जो उनकी फांसी में भी एक कारण थी। सूली से जिसने लाश को उतारा है वह मेग्दलीन थी। **तो जीसस को स्वीकार करना उस समाज के लिए असंभव रहा होगा।** इस-लिए जीसस को जब सूली दी, तो दो चोरों के बीच में सूली दी। दो तरफ दो चोर लटकाये, बीच में जीसस को लटकाया। और जनता में से लोगों ने यह भी चिल्लाकर कहा कि इन चोरों को क्यों मार रहे हो, लेकिन किसी ने यह नहीं कहा कि जीसस को क्यों मार रहे हो। यही आदमी फिर करोड़ों लोगों का मसीहा हो गया ! फिर हम व्याख्या कर लेते हैं ! फिर हम इन्तजाम कर लेते हैं। फिर हम सब साफ सुथरा कर लेते हैं।

मनुष्य इतिहास में क्रांतियों की असफलता

बगावत आत्मा का जन्म है। हिप्पी विद्रोह जो हो रहा है, इस संबंध में एक बात और समझ लेने जैसी है कि हिप्पी क्रांतिकारी (रिव्होल्यूशनरी)

नहीं है; विद्रोही (रिबेलियस) है। क्रांतिकारी नहीं है; बगावती है, विद्रोही है। और क्रांति और बगावत के फर्क को थोड़ा समझ लेना उपयोगी है। असल में हजारों साल में कितनी ही क्रांतियां हो चुकीं; लेकिन सब क्रांतियां असफल हो गयीं। हिप्पी का कहना है, सब क्रांतियां असफल हो गयीं, क्योंकि क्रांति सफल हो ही नहीं सकती है। सफल हो सकता है, केवल अनियोजित विद्रोह। १९१७ की क्रांति भी असफल हो गई, क्योंकि एक जार को मारा और दूसरा जार उसकी जगह बैठ गया। सिर्फ नाम बदल गया है— स्टेलिन हो गया उसका नाम। वह दूसरा जार है। किसी जार ने इतने आदमी न मारे थे।

स्टेलिन ने अपनी जिन्दगी में एक करोड़ लोगों की हत्या की, किसी जार ने अथवा सब जारों ने मिलकर भी इतने आदमी नहीं मारे थे। तो बड़ी कठिन बात है कि क्रांति भी होती है, तो फिर उसके ऊपर एक जार बैठ जाता है। नाम बदल जाता है, झंडा बदल जाता है; बैठने वाले नहीं बदलते। वही चंगेज, वही तैमूर फिर वापस बैठ जाता है। हिटलर सोशलिस्ट था। उसकी पार्टी का नाम था 'नेशनलिस्ट सोशलिस्ट पार्टी', राष्ट्रीय समाजवादी दल ! किसने सोचा था कि हिटलर यह करेगा, जो उसने किया। क्रांतियां जब सफल होती हैं तब पता चलता है कि सब व्यर्थ हो गया। जब तक सफल नहीं होतीं तब तक तो लगता है बहुत कुछ हो रहा है। फिर एकदम व्यर्थ हो जाती हैं।

हमारे ही देश में क्रांति हुई और १९४७ के बाद हमने सोचा, आजादी आ जायेगी। फिर १९४७ के बाद भी हम सोच ही रहे हैं कि २२ साल हो गए, अभी तक आई नहीं ? कब आयेगी ? हां, फर्क हो गया। सफेद चमड़ी के मालिक बदल गए, उनकी जगह काली चमड़ी के लोग बैठ गए। काली चमड़ी वालों को भी लगा कि सफेद चमड़ी होना चाहिए। चमड़ी तो सफेद करना बहुत मुश्किल थी, कपड़े उसने सफेद कर लिए। बस इतना फर्क हो गया। अंग्रेजों ने जितनी गोलियां नहीं चलायीं इस देश में, इन्हें, जिनको हम अपने ही आदमी कहें, उन्होंने चलाईं। कभी अगर इतिहास पूछेगा तो वह पूछ सकेगा कि गुलाम कौम पर इतनी गोलियां नहीं चलानी पड़ीं, यह बात क्या है ? हो क्या गया है !

कोई क्रांति सफल नहीं हो पायी, न होने का कारण है। एक तो यह कि क्रांति के उपकरण बड़े गैर-क्रांतिकारी होते हैं, बड़े दकियानूसी होते हैं। दूसरा यह कि क्रांति वस्तुतः प्रतिक्रियात्मक (रिएक्शनरी) होती है। उसके

प्राण उसी में होते हैं, जिससे कि वह लड़ती है। फिर इसलिए शत्रु के मरते ही उसके होने का भी कोई कारण नहीं रह जाता है। **क्रांति की सफलता ही क्रांति की मृत्यु बन जाती है।**

सामाजिक क्रांति नहीं---व्यक्तिगत विद्रोह

हिप्पी का खयाल यह है कि क्रांति इसलिए भी सफल नहीं होती कि क्रांति पुन: समाज को ही केन्द्र मानकर चलती है। वह कहती है, समाज बदलो। **विद्रोह व्यक्ति को केन्द्र मानता है, क्रांति समाज को केन्द्र मानती है।** क्रांति कहती है, पूरा समाज बदले। हिप्पी कहता है भाड़ में जाये तुम्हारा पूरा समाज, मैं बदलता हूं। मैं तुम्हारे समाज के लिए नहीं रुकूंगा, मैं अकेला बदल जाता हूं। इसलिए हिप्पी व्यक्तिगत विद्रोही है। और मेरी समझ में यह बात भी बड़ी कीमती है, क्योंकि सब क्रांतियां सफल हो गयीं फिर भी हम नई क्रांतियों की बात सोचते चले आते हैं। **असल में क्रांति करने में जो इन्तजाम करना पड़ता है, वह क्रांति की ही हत्या कर देता है।**

पहले तो क्रांति करने के लिए संगठन बनाना पड़ता है और जैसे ही संगठन बनता है तो संगठन के अपने नियम हैं। वह संगठन किसी का भी हो जब संगठन बनता है और कोई विचार इंस्टीट्यूशन बनता है, तब सब रोग वापस लौट आते हैं। जो रोग पुराने संगठन में थे वे पुराने संगठन की वजह से न थे, संगठन के कारण कुछ रोग अनिवार्य हैं। संगठन होगा तो कोई पद पर होगा, मालिक होगा, अधिनायक (डिक्टेटर) होगा, कोई आज्ञा चलायेगा। **संगठन होगा तो कुछ थोड़े से लोग शक्तिशाली हो जायेंगे। संगठन होगा तो धन इकट्ठा होगा।** संगठन होगा तो भीड़ इकट्ठी होगी। और ध्यान रहे भीड़ सदा परंपरानुगत (कन्फर्मिस्ट) है। भीड़ सदा 'हां-हुजूर' वाली होती है।

'ड्रापिंग आउट'---गलत भीड़ से अलग हट जाना

हिप्पी यह कहता है कि अब क्रांति से नहीं होगा अब तो विद्रोह करना पड़ेगा। विद्रोह का मतलब है कि जिसे लगता है गलत है, वह तत्काल गलत से विदा हो जाये। उनका एक शब्द है 'ड्रापिंग आउट'। वे कहते हैं रास्ते पर भीड़ चली जा रही है, तो हम कोई आग्रह नहीं करते कि सारी भीड़ को बदलेंगे। हमें लगता है कि गलत है यह भीड़, गलत है यह रास्ता—'वी जस्ट ड्राप आउट'—हम रास्ता छोड़कर नीचे उतर जाते हैं। हम कहते हैं, 'नमस्कार, तुम जाओ।'

यह धारणा बड़ी नयी है, व्यक्तिगत विद्रोह की— बड़ी सबल भी है, क्योंकि शायद किसी क्रांतिकारी ने इतना दांव नहीं लगाया। वे कहते हैं, सब

बदलेंगे। तो एक कम्युनिस्ट भी करोड़पति हो सकता है। कोई कठिनाई नहीं है। वह कहता है जब समाज बदलेगा, जब सबकी सम्पत्ति बंटेगी तो मेरी भी बंट जायगी। लेकिन जब तक सबकी नहीं बंटी तब तक मुझे क्यों बांटने को फिकर करना है। लेकिन हिप्पी कहता है, सम्पत्ति अगर रोग है, तो मैं तो बाहर हुआ जाता हूं। फिर जब समाज बदलेगा, बदलेगा। लेकिन फिर तुम मुझे जिम्मेदार न ठहरा सकोगे।

अगर वियतनाम में गलत युद्ध हो रहा है, तो क्रांतिकारी कहेगा कि आंदोलन चलाओ, हड़ताल करो, घेराव करो। हिप्पी कहता है सब घिराव करो, सब हड़ताल करो, सब आंदोलन चलाओ; लेकिन आंदोलन चलाने में हिंसा चाहिए, घिराव करने में हिंसा चाहिए, और **अगर जीत गये तुम किसी दिन तो जीतते-जीतते इतने हिंसक हो जाओगे कि वियतनाम की जगह दूसरा वियतनाम तुम चला दोगे।** हिप्पी कहता है कि हमको लगता है कि गलत है वियतनाम, हम युद्ध पर जाने से इन्कार करते हैं। तुम हमें गोली मार दो, हम ये बैठे हैं, हम नहीं जायेंगे।

व्यक्तिगत विद्रोह—पहली दफा निपट एक व्यक्ति साहस कर रहा है कि सारा समाज गलत लगता है, तो हम बाहर हो जायें। वह यह नहीं कह रहा कि समाज के विवाह के नियम बदलेंगे तब हम सुधरेंगे। वह यह कह रहा है, हमने बदल दिये हैं नियम अपने लिए। अब जो तकलीफ होगी वह हम सह लेंगे।

विवाह-संस्था नहीं---मुक्त प्रेम

अब हिप्पी ऐसी लड़कियों के साथ रह रहा है जिससे वह विवाहित नहीं है। हिप्पी लड़कियां ऐसे युवकों के साथ रह रही हैं जिनसे उनका कोई विवाह नहीं हुआ। **क्योंकि हिप्पी कहता है कि विवाह जो है वह 'लीगलाइज्ड प्रास्टीट्यूशन' (न्यायानुमोदित व्यभिचार) है। वह समाज के द्वारा आदेशित, लाइसेन्स्ड वेश्यागिरी है।** समाज लाइसेन्स देता है दो आदमियों के लिए कि अब हम तुम्हारे बीच में बाधा न बनेंगे। लाइसेन्स देने की कई तरकीबें हैं। कहीं सात चक्कर लगवाकर लाइसेन्स देता है, कहीं माला पहनवाकर देता है, कहीं दफ्तर में रजिस्टर पर दस्तखत करवाकर देता है। ये विधियां तो गैर-महत्वपूर्ण नॉन-एसेन्शियल हैं। महत्वपूर्ण यह है कि समाज एक लाइसेन्स देता है कि अब इन दो आदमियों के बीच जो यौन संबंध होंगे उनमें हम बाधा न देंगे।

हिप्पी यह कहता है कि मेरा प्रेम मेरी निजी बात है। और जिससे मेरा प्रेम है, यह दो व्यक्तियों की बात है, इसमें हमें समाज से स्वीकृति का

सवाल कहां है ? इसमें पूरे समाज का संबंध कहां है ? यह पूरा समाज हमारे प्रेम तक पर भी काबू रखने की कोशिश क्यों करता है ? यह हमें स्वतन्त्र व्यक्ति बिलकुल नहीं रहने देना चाहता । प्रेम पर भी इसका काबू होना चाहिए। लेकिन वह तकलीफें झेल रहा है । क्योंकि बच्चा हो जायेगा हिप्पी लड़की को और बच्चे को स्कूल में भरती करने जायेगी, तो वहां शिक्षक पूछता है, इसके बाप का नाम ? तो हिप्पी लड़की लिखवाती है कि नहीं, इसका कोई बाप नहीं है, मां ही है । बड़ी तकलीफ है, जिस गांव में एक लड़की यह कह सकती हो कि इसका बाप नहीं है सिर्फ मां है । आप अगर बिना बाप के नाम लिख सकते हों तो ठीक ।

मुक्त यौन--बोध कथा सत्यकाम जाबाल की

मुझे उपनिषद् की एक कहानी याद आती है, सत्यकाम जाबाल की । वक्त बदल जाता है इसलिए हम कहानियों को बढ़िया रूप दे देते हैं । सत्यकाम गुरु के आश्रम गया तो गुरु ने पूछा, तेरे पिता का नाम क्या है ? तो वह वापिस लौटा । उसने अपनी मां को कहा कि मेरे पिता का नाम क्या है ? तो उसकी मां ने कहा, जब मैं युवा थी और तेरा जन्म हुआ, तो बहुत से लोगों की सेवा मैं करती थी । कौन तेरा पिता है, मुझे पता नहीं । तो तू जा वापस, अपने गुरु से कह देना सत्यकाम मेरा नाम है, जाबाला मेरी मां का नाम है, इसलिए सत्यकाम जाबाल मुझे कह सकते हैं । और मेरी मां ने कहा है कि जब वह युवा थी तो बहुत लोगों के संपर्क में आयी । पता नहीं पिता कौन है । सत्यकाम वापस गया । उसने गुरु से कहा कि मेरी मां ने कहा है कि जब मैं युवा थी तब बहुत लोगों के संपर्क में आई, पता नहीं कि तेरा पिता कौन है । इतना ही उसने कहा कि मेरा नाम सत्यकाम है और मां का नाम जाबाला है इसलिए आप मुझे सत्यकाम जाबाल कह सकते हैं ।

मैंने तो सुना है, कोई कह रहा था कि जबलपुर जाबाल के नाम पर ही निर्मित है । पता नहीं मुझे, मुझे कोई कह रहा था । हो सकता है । लेकिन गुरु ने कहा कि तब तुझे मैं ले लेता हूं, क्योंकि **मैं मान लेता हूं कि तू निश्चित ही ब्राह्मण है, क्योंकि इतना सत्य सिर्फ ब्राह्मण ही बोल सकता है** । इतना सत्य तेरी मां ने बोला कि मुझे पता नहीं बहुत लोगों के संपर्क में आयी, पता नहीं कौन पिता था । इतना सत्य सिर्फ ब्राह्मण ही बोल सकता है ।

हिप्पी एक अर्थ में ब्राह्मण है । **इस अर्थ में ब्राह्मण है कि जीवन का जो सत्य है**, जैसा है, वह वैसा बोल रहा है, कह रहा है । ये बातें, और चौथी अंतिम बात, फिर मेरी क्या दृष्टि है हिप्पी के बाबत, वह मैं आपको कहूं ।

चेतना के विस्तार की खोज में

चौथी बात। मनुष्य ने इतनी सम्पत्ति, इतनी सुविधा, इतनी सामग्री पैदा की है, लेकिन किसी गहरे अर्थ में मनुष्य भीतर दरिद्र हो गया है, चेतना संकुचित हो गयी है। तो हिप्पी का चौथा सूत्र है, **'चेतना का विस्तार' (एक्स्पेन्शन आफ कान्शसनेस)**। वह कह रहा है कि **हम अपनी चेतना को कैसे फैलायें**। तो चेतना फैलाने के लिए वह सब तरह के प्रयोग कर रहा है। गांजा, अफीम, भांग, हशीश, एल. एस. डी., मेस्केलीन, मरीजुआना, योग-ध्यान वह यह सब कर रहा है कि चेतना कैसे फैले, संकुचित चेतना का विस्तार कैसे उपलब्ध हो जाय। तो केमिकल ड्रग्ज का भी उपयोग कर रहा है। एल. एस. डी., मेस्केलीन, जिनके द्वारा थोड़ी देर के लिए चित्त नये लोक में प्रवेश कर जाता है। कानून विरोध में है, क्योंकि कानून तो हर नई चीज के विरोध में है। क्योंकि कानून तो बनता है, कभी और युग बदल जाता है। कानून तो एल. एस. डी. को पाप मानता है। मैं नहीं समझ पा रहा हूं।

एल. एस. डी., मेस्केलीन मरीजुआना का आधार

एल. एस. डी. और मेस्केलीन में बड़ी संभावनाएं हैं। **इस बात की बहुत संभावनाएं हैं कि ये दोनों चीजें मनुष्य की चेतना को नये दर्शन कराने में सफल रूप से प्रयुक्त की जा सकती हैं।** ऐसा मैं नहीं मानता हूं कि इनके द्वारा कोई समाधि को उपलब्ध हो जायगा, लेकिन समाधि की एक झलक मिल सकती है। और झलक मिल जाये तो समाधि की प्यास पैदा हो जाती है। आज जो पश्चिम में योग और ध्यान के लिए इतना आकर्षण है, उसके बहुत गहरे में एल. एस. डी. है। लाखों लोग एल. एस. डी. लेकर देख रहे हैं।

जब कोई आदमी एल. एस. डी. की एक टिकिया लेता है तो कई घंटों के लिए उसकी सारी दुनिया बदल जाती है। जैसे 'ब्लेक' की कविता हम पढ़ें तो ऐसा लगता है कि ब्लेक कुछ ऐसे रंग जानता है जो हम नहीं जानते। उसे फूल कुछ ऐसा दिखाई पड़ता है जैसा हमें दिखाई नहीं पड़ता। लेकिन एल. एस. डी. लेकर हम भी वही जान पाते हैं। पत्ते-पत्ते रंगीन हो जाते हैं, फूल-फूल अद्भुत हो जाता है। एक आदमी की आंख में इतनी गहराई दिखाई पड़ने लगती है जितनी कभी नहीं दिखाई पड़ी। एक साधारण-सी कुर्सी भी एक जीवंत अर्थ ले लेती है। थोड़ी देर के लिए जगत और ढंग का दिखाई पड़ने लगता है। जैसे कि बिजली चमक जाये अंधेरी रात में, और एक सेकेंड को वृक्ष दिखाई पड़े, फूल दिखाई पड़े, रास्ता दिखाई पड़े। बिजली तो गयी तो फिर अंधेरा भर गया, लेकिन अब हम वही आदमी नहीं हो सकते जो बिजली के पहले थे।

इन साइकोजेनिक ड्रग्ज का, मन-विस्तार करने वाले इन रासयनिक तत्वों का हिप्पी बड़े पैमाने पर प्रयोग कर रहे हैं। मेरी समझ में सोमरस इससे भिन्न बात न थी। अल्डस हक्सले ने तो एक किताब लिखी है। तो उसमें सन् २००० वर्ष के बाद जो विकसित साइकोजेनिक ड्रग, रासायनिक द्रव्य होगा उसका नाम ही सोमा दिया है, सोमरस के आधार पर ही। और एल. एस. डी. और मेस्केलीन जिन्होंने लिया है तो पहली दफा उनको ख्याल आया कि वैदिक ऋषियों को देवी-देवता एकदम जमीन पर चलते फिरते नजर क्यों आते थे। वे हमको भी आ सकते हैं। भांग में कुछ थोड़ी सी बात है, ज्यादा नहीं बहुत थोड़ी। लेकिन भांग के पीछे थोड़ा सा 'हेंग ओव्हर' होता है। एल. एस. डी. का कोई 'हेंग ओव्हर' नहीं है। गांजे में कुछ थोड़ी बात है, लेकिन बहुत ज्यादा नहीं।

रासयनिक द्रव्यों का चेतना पर प्रभाव

हजारों साल से साधु, भांग, गांजा, अफीम का उपयोग करते रहे हैं। वह अकारण नहीं। और इधर खोज होती है उससे कुछ हैरानी के तथ्य सामने आते हैं। एक आदमी बहुत देर तक उपवास करे तो भी शरीर में जो फर्क होते हैं, वे केमिकल हैं। अब ऊपर से देखने पर लगता है कि महावीर तो गांजे के बिल्कुल खिलाफ हैं। लेकिन उपवास के बहुत पक्ष में हैं। हालांकि उपवास से भी ३० दिन भूखा रहने से शरीर में जो फर्क होंगे वे केमिकल (रासायनिक) हैं और गांजा लेने से भी जो फर्क होंगे वे केमिकल हैं, कोई फर्क नहीं है। प्राणायाम से भी जो फर्क होते हैं वे केमिकल हैं।

अगर एक आदमी विशेष विधि से श्वास लेता है तो आक्सीजन की मात्रा में अंतर पड़ने शुरू हो जाते हैं। ज्यादा आक्सीजन कुछ तत्वों को जला देती है, कुछ तत्वों को बचा लेती है। भीतर जो फर्क होते हैं वे केमिकल हैं। हिप्पी यह कह रहा है कि अब तक की जितनी साधना पद्धतियां हैं वे किसी न किसी रूप में केमिकल फर्क ही ला रही हैं। तो केमिकल फर्क एक गोली से भी लाया जा सकता है।

चौथा, जो हिप्पी का जोर है, जिसकी वजह से वह परेशानी में पड़ा हुआ है, वह इन ड्रग्स के कारण है। कानून इनके खिलाफ है। कानून उन्होंने बनाया था जिनको एल. एस. डी. का कुछ भी पता नहीं था। डा० लियरी एक अद्‌भुत आदमी है इस दिशा में, जिस आदमी ने इधर बहुत काम किया कि ड्रग्स कैसे मनुष्य को समाधि तक पहुंचा सकते हैं। और जिन लोगों ने एक बार इस तरह का प्रयोग किया है वे आदमी और ही तरह के हो गये, उनकी जिन्दगी और ही तरह की हो जाती है।

जैसे हम जीते हैं एक तनाव में, जैसे ही कोई इस तरह के ड्रग्स लेता है तो सारा मन रिलेक्स्ड (विश्रामपूर्ण) हो जाता है। जीते हैं फिर आप, तनाव में नहीं, अभी और यहां। हिप्पीज का जो शब्द है उसके लिए वह है, 'टर्निंग ऑन', कोई एक टर्न है, मोड़ है, दरवाजा है जो एक गोली दे देने से आपके लिए खुल जाता है। जैसे 'ड्रापिंग आफ', रास्ते के किनारे उतर जाना, ऐसे ही टर्निंग ऑन जहाँ हम हैं वहाँ से कहीं और मुड़ जाना—उस दुनिया में, उस आयाम (डायमेन्सन) में जिसका हमें कोई पता नहीं है।

रासायनिक प्रयोग के द्वारा मनुष्य की चेतना विस्तीर्ण हो सकती है और काव्यात्मक सौंदर्यबोध (एस्थेटिक) से भर सकती है। इस दिशा में डॉ लियरी बड़े गहरे प्रयोग कर रहे हैं। छोटी-छोटी उनकी जमातें बनी हुई हैं—जंगलों में, पहाड़ों में, गांवों के बाहर। पुलिस उनका पीछा कर रही है, उन्हें उखाड़ रही है। केवल अमेरिका में दो लाख हिप्पी हैं। और यह तो ठीक गणना की संख्या है। लेकिन बहुत से लोग जो पीरियाडिकल (सावधिक) हिप्पी हो जाते हैं कोई दो चार महीने के लिए, फिर वापिस दुनिया में लौट आते हैं, उनकी संख्या भी बड़ी है। बहुत से सेन्टरर्स हैं जहाँ बैठकर इन सब का प्रयोग चल रहा है। जहां बिल्कुल ही ठीक सायंटिफिक निरीक्षण में लोग एल. एस. डी. और ये सारी चीजें ले रहे हैं।

एल्डस हक्सले ने एक किताब लिखी है 'डोर्स ऑफ परसेप्शंस', उस किताब में उसने कहा हैकि कबीर और नानक को जो हुआ वह मैं अब जानता हूं कि क्या हुआ, एल. एस. डी. लेने के बाद हक्सले को लगता हैकि क्या हुआ। क्योंकि जिस तरह की बातें वे कह रहे हैं कि अनहद नाद बज रहा है और अमृत की वर्षा हो रही है और आकाश में बादल घिरे हैं और अमृत ही अमृत बरस रहा है और कबीर नाच रहे हैं। अब यह जो हम कविता में पढ़कर समझने की कोशिश करते हैं, लेकिन न तो कभी कोई बादल दिखाई पड़ते हैं, जिनमें अमृत भरा हो,न कभी अमृत बरसता दिखाई पड़ता है, न कोई अनहद नाद सुनाई पड़ता। लेकिन एल. एस. डी. लेने पर ऐसी ध्वनियां सुनाई पड़नी शुरू होती हैं जो कभी नहीं सुनी गयीं। और ऐसी बरसा शुरू हो जाती है जो कभी नहीं हुई और इतना मन हल्का और नया हो जाता है जैसा कभी न था।

चौथी बात हिप्पीज की जो नवीनतम है, वह है 'एक्सपेंशन आफ कांशसनेस थ्रू ड्रग्स' (रासानिक द्रव्यों के द्वारा चेतना का विस्तार)—ये चार सूत्र मैं मौलिक मानता हूं।

वैकल्पिक समाज (आल्टरनेट सोसायटी) की खोज

मेरी क्या प्रतिक्रिया है, वह मैं संक्षेप में कहूं। हिप्पियों ने छोटी-छोटी कम्यून बना रखी हैं। वे कम्यून विकल्प समाज (ऑल्टरनेट सोसायटी) हैं। वे कहते हैं, एक समाज तुम्हारा है 'हां-हुजूरों' का, वियतनाम में लड़ने वालों का, कश्मीर किसका है यह दावा करने वालों का और एक हमारा है जिनका कोई दावा नहीं है, जिनका वियतनाम में किसी से कोई संघर्ष नहीं, कश्मीर में जिनका कोई झगड़ा नहीं, राजधानियों में जाने की कोई इच्छा नहीं। एक समाज तुम्हारा है जिसमें तुम कहते हो कि भविष्य में सब कुछ होगा। एक हमारा है जो कहता है अभी और यहीं जो होना है वह हो। **एक ऑल्टरनेट सोसायटी, एक वैकल्पिक समाज है हिप्पियों का,** तो इस समाज से जो ऊब गये, परेशान हो गये वे उस समाज में प्रवेश कर जाते हैं। हिप्पी अभी और यहीं सदा आनन्द में है, जो कहता है, इसी वक्त आनंद में हूं और कल की चिन्ता नहीं करता।

आनंद की कृत्रिम झलक भी उपयोगी

हिप्पियों के विद्रोह के संबंध में मेरी पहली दृष्टि तो यह है, पीछे से शुरू करूं, साइकोजेनिक ड्रग्स से, निश्चित ही रासायनिक तत्वों के द्वारा झलक पायी जा सकती है, लेकिन सिर्फ झलक, अवस्था नहीं। महावीर या कबीर या बुद्ध के पास जो है, वह अवस्था है, झलक नहीं। लेकिन झलक भी कीमती चीज है। झलक को अवस्था समझ लेना भूल है। तो हिप्पियों से यहां मेरा फर्क है। वे झलक को अवस्था समझ रहे हैं। झलक सिर्फ झलक है और **झलक किसी गोली पर निर्भर है वह व्यक्ति को रूपांतरित (ट्रांसफार्म) नहीं कर पाती।** गोली के असर के बाद आदमी वहीं का वहीं होता है, लेकिन बुद्ध दूसरे आदमी हैं। उस अनुभव के बाद वे दूसरे आदमी हैं। सत्य की, ब्रह्म की आत्मा की, मोक्ष की, निर्वाण की प्रतीति के बाद आदमी दूसरे आदमी हैं। पहला आदमी मर गया। यह दूसरा जन्म हुआ उसका, वह द्विज हुआ। यह दूसरा ही आदमी है। यह वही आदमी नहीं है। लेकिन ड्रग्स के द्वारा जो झलक मिलती है, वह झलक ही है; अवस्था नहीं है।

हिप्पी इतना तो ठीक कहते हैं कि यह झलक कीमती है। और जिन्हें नहीं मिली उन्हें मिल जाय तो शायद वह अनुभव, अवस्था की भी तलाश करें। जैसे यहां मैं बैठा हूं। लंदन मैं नहीं गया हूं, न्यूयार्क मैं नहीं गया हूं, लेकिन एक फिल्म बनाई जा सकती है जिसमें मैं लंदन को देख लूं। लेकिन यह मेरा लंदन में होना नहीं है, हालांकि फिल्म को देखकर लंदन में

होने का ख्याल पैदा हो सकता है। एक यात्रा शुरू हो सकती है। ड्रग्स यात्रा के पहले बिन्दु पर उपयोगी हो सकते हैं। इससे मैं हिप्पियों से राजी हूं और हिप्पी विरोधियों के विरोध में हूं, जो कहते हैं ड्रग्स का कोई उपयोग नहीं, कोई अर्थ नहीं। दूसरी बात में मैं हिप्पी विरोधियों से राजी हूं, क्योंकि यह अवस्था नहीं है। और हिप्पियों के विरोध में हूं, क्योंकि उन्होंने अमर झलक को अवस्था समझा और बाहर से आरोपित (फोर्स्ड) केमिकल प्रभाव को उन्होंने समझा कि मेरी आत्मा नई हो गयी, तो वे निश्चित ही भूल में पड़े जा रहे हैं। शराबी सदा से इसी भूल में है। इस भूल के मैं विरोध में हूं, लेकिन यह मुझे लगता है कि आने वाले मनुष्य के लिए साइकोजेनिक ड्रग्स का बहुत कीमती उपयोग किया जा सकता है।

हिप्पियों का ढांचा और प्रतिक्रियाओं की भूल

दूसरी बात : हिप्पी क्रांति के विरोध में है, विद्रोह के पक्ष में। लेकिन मजा यह है कि जितने हिप्पी गये छोड़कर समाज को उनका भी 'पेटर्न' (ढांचा) बन गया है। अगर आप बाल कटाकर हिप्पियों में पहुंच जायें तो हिप्पी आपको ऐसे गुस्से से देखेंगे जैसे गुस्से से बड़े बाल वाले आदमी को समाज देखता है। अगर आप हिप्पी समाज में कहें कि मैं रोज स्नान करूंगा, तो आप उसी क्रोध से देखे जायेंगे जिस तरह से किसी ब्राह्मण के घर में ठहरा हूं और कहूं कि आज स्नान न करूंगा। ऐसा यह जो विद्रोह है, वह विद्रोह रिएक्शनरी (प्रतिक्रियात्मक) है। हिप्पी स्नान नहीं करता। महावीर को मानने वाले मुनियों को बड़ा प्रसन्न हो जाना चाहिये। वे भी स्नान नहीं करते। हिप्पी गंदगी को ओढ़ता है, क्योंकि वह कहता है—जैसा मैं हूं, हूं। अगर मेरे पसीने में बदबू आती है, तो मैं सुगंध (परफ्यूम) न डालूंगा। आने दो पसीने में बदबू। पसीने में बदबू है, यह बिल्कुल ठीक है। लेकिन यह प्रतिक्रिया अगर है तो खतरनाक है। माना कि पसीने में बदबू है, लेकिन परफ्यूम से बदबू मिटाई जा सकती है और दूसरे आदमी को बदबू झेलने के लिए मजबूर करना दूसरे की सीमाओं का अनाधिकृत अतिक्रमण (ट्रेसपास) है। मेरे पसीने में बदबू है, मैं मजे से अपने पसीने में रहूं, लेकिन जब भी दूसरा आदमी मेरे पड़ौस में है, उसको भी मेरी बदबू झेलने के लिए मजबूर करना, तो हिंसा शुरू हो गई। यानी उसकी स्वतन्त्रता में बाधा डालना शुरू हो गया।

हिंसा की सूक्ष्मता—एक बोध प्रसंग

एक घटना मैंने कहीं सुनी है कि रवीन्द्रनाथ के पास गांधी जी मेहमान थे। सांझ को जा रहे थे दोनों घूमने, तो रवीन्द्रनाथ ने कहा, मैं जरा तैयार हो

लूं। पर उन्हें तैयार होने में बहुत देर लगी। गाँधीजी को तैयार होने की बात में ही हैरानी थी। फिर देर होते देख उन्होंने झांककर भीतर देखा तो पाया कि रवीन्द्रनाथ आदमकद आइने के सामने खड़े स्वयं को सजाने में लीन हैं। गांधी जी ने कहा : यह क्या कर रहे हैं, और इस उम्र में ! तो कवि ने कहा: "जब उम्र कम थी तब तो बिना सजे भी चल जाता था, अब नहीं चलता है। और मैं किसी को कुरूप दिखूं तो लगता है कि उसके साथ हिंसा कर रहा हूं।"

मैं मानता हूं कि रियेक्शनरी कभी भी ठीक अर्थों में रिबेलियस नहीं हो पाता है। प्रतिक्रियावादी जो सिर्फ प्रतिक्रिया कर रहा है वह समाज से उल्टा हो जाता है। तुम ऐसे कपड़े पहनते हो, हम ऐसे पहनेंगे। तुम स्वच्छता से रहते हो, हम गंदगी से रहेंगे। तुम ऐसे हो, हम उल्टे चले जायेंगे। लेकिन उल्टा जाना विद्रोह नहीं है, प्रतिक्रिया है। मैं मानता हूं विद्रोह की बड़ी कीमत है। लेकिन हिप्पी प्रतिक्रिया में पड़ गया है। प्रतिक्रिया की कोई कीमत नहीं है।

विद्रोह का तो एक मूल्य है, लेकिन प्रतिक्रिया एक रोग है। और ध्यान रहे प्रतिक्रियावादी हमेशा उससे बंधा रहता है, जिसकी वह प्रतिक्रिया कर रहा है। अब ऐसा जरूरी नहीं कि एक आदमी नंगा आकर इस कमरे में बैठे तो वह सहज ही हो। यह भी हो सकता है कि वह सिर्फ कपड़े पहनने वाले लोगों की प्रतिक्रिया में इधर नंगा आकर बैठ गया हो, सहज बिल्कुल न हो। सहजता का तो मूल्य है, लेकिन सहजता कपड़े पहनने में हो ही नहीं सकती ऐसा कौन कह सकता है ? प्रतिक्रिया पकड़ रही है। प्रतिक्रिया के परिणाम खतरनाक हैं और प्रतिक्रिया ज्यादा स्थायी नहीं होती सिर्फ संक्रमण की बात होती है। इसलिए धीरे-धीरे प्रतिक्रिया भी 'सेटल' (व्यवस्थित) होती जा रही है। **हिप्पियों का भी एक समाज बन गया, उसके भी नियम और कानून बन गये। उनकी भी आर्थोडॉक्सी बन गयी है। उनका भी पुरोहित-पंडित-नेता सब हो गया है।** वहां भी आप जायें तो आप जैसे हैं वे आपको बेचैनी देना शुरू कर देंगे।

हिप्पियों का पागलपन : तीन बोध उदाहरण

अभी मैं एक घटना पढ़ रहा था। एक अमेरिकन पत्रकार महिला हिप्पियों का अध्ययन करने बहुत से समाजों में गयी। वह एक समाज में गई है वहां भोजन चल रहा है हिप्पियों का, तो उन्होंने चम्मचें नहीं ली हैं। हिन्दुस्तान में क्या करेंगे ? अगर हिप्पी आयें तो बड़ी मुश्किल में पड़ेंगे। अमेरिका में तो हाथ से खाना बगावत है। हिन्दुस्तान में चम्मच से खाना भी बगावत हो सकती है।

हाथ से ही भोजन खा रहे हैं वे, हाथ से खाने की आदत भी नहीं है, तो सब गंदे हाथ हो गये हैं। और इकट्ठा भोजन रखा हुआ है, वह सब गंदा हो गया है। और इस तरह भोजन खा रहे हैं। अब यह जो महिला पत्रकार है यह अपनी चम्मच उठाती है, तो किसी ने उसकी चम्मच छीन ली, और उसका हाथ भोजन में डाल दिया है। अब वह बहुत घबड़ा गयी है, लेकिन वहां यही नियम है। अगर वह महिला हां भरती है तो मैं कहता हूं अब वह महिला फिर (कन्फरमिस्ट) हो गयी है। उसे इन्कार करना चाहिए। लेकिन वहां इंकार करना मुश्किल है।

वहां एक हिप्पी ने एक स्त्री का ब्लाउज फाड़ डाला है। उसके ऊपर उसने सब खाना डाल दिया और उसके शरीर को चाट रहा है। अब यह सब प्रतिक्रियाएं हो गयीं। यह पागलपन हो गया। हां, किसी प्रेम के क्षण में किसी स्त्री के शरीर का स्वाद भी अर्थपूर्ण हो सकता है। वह अनिवार्यतः अनर्थ नहीं है। लेकिन बस किसी क्षण में। लेकिन किसी स्त्री के शरीर पर शोरबा डालकर उसे चाट कर तो वे सिर्फ मुंह दिखा रहे हैं तुम्हारे समाज को। वे कह रहे हैं कि तुम क्या समझते हो हमें!

गिन्सबर्ग हिप्पी कवि है। एक छोटी-सी 'पोयट्स गेदरिंग' (कवि सम्मेलन) में बोल रहा है। साहस पर कोई कविता बोल रहा है। और उसमें अश्लील शब्दों का उपयोग कर रहा है। एक आदमी ने खड़े होकर कहा कि इसमें कौन-सा साहस है— इस गाली-गलौज का उपयोग करने में। तो गिन्सबर्ग ने उत्तर में कहा, फिर साहस देखोगे? असली साहस दिखलायें? उस आदमी ने कहा, दिखलाओ। तो उसने पेंट खोल दिया और वह नंगा खड़ा हो गया। और उसने उस आदमी से कहा कि तुम भी नंगे खडे हो जाओ, अगर साहसी हो तो। लेकिन नंगे खड़े होने में कौन-सा साहस है? नंगे खड़े होने में साहस है, ऐसा कहने वाला आदमी नंगा खड़ा होने से ज्यादा डरा हुआ होना चाहिए; अन्यथा साहस दिखाना न पड़े!

भीतर भय, बाहर साहस : एक बोध संस्मरण

मेरे एक शिक्षक थे हाई स्कूल में। उनको जब भी मौका मिल जाये वे अपनी बहादुरी की बात कहे बिना नहीं रहते थे कि मैं अकेला ही मरघट चला जाता हूं अंधेरी रात में, और बिल्कुल अकेले। मैंने एक दिन उनसे कहा कि आप ऐसी बातें न किया करें। लड़कों को शक होता है कि आप कुछ डरपोंक आदमी हैं। इन बातों को क्या बहादुर आदमी कहेगा? मैं अकेला ही अंधेरी रात में चला जाता हूं, यह तो सिर्फ भयभीत आदमी ही कह

सकता है। जिसको भय नहीं है उसको पता ही नहीं चलता कि कब अंधेरी रात है और कब सूरज निकला। वह बस चला जाता है और हिसाब नहीं रखता!

पीछे गिन्सबर्ग मुझे कभी मिले तो उससे मैं कहना चाहूंगा कि तुमने बहादुरी नहीं बताई, तुमने सिर्फ मुंह बिचकाया। वह आदमी कपड़े पहने हुए है, तुमने कपड़े निकाल दिये, कुछ बहादुरी न हुई। और इससे उल्टा भी हो सकता है कि कल पांच सौ आदमी नंगे बैठे हों और मैं कपड़े पहने पहुंच जाऊं। और मैं कहूं कि मैं बहादुर हूं, क्योंकि मैं कपड़े पहने हुए हूं। तब भी कोई कठिनाई नहीं है।

नैतिक साहस : एक व्यंग कथा

मैंने एक घटना सुनी है— नैतिक साहस (मॉरल करेज) की। मैंने सुना है एक स्कूल में एक पादरी नैतिक साहस (मॉरल करेज) क्या है यह समझा रहा है। उसने कहा कि ३० बच्चे पिकनिक पर गये हैं। वे दिन भर में थक गये, फिर सांझ को आकर उन्होंने भोजन किया। २९ बच्चे तो तत्काल अपने बिस्तर में चले गये, एक बच्चा थका-मांदा और ठंडी रात उसके बाद भी घुटने टेक कर उसने प्रार्थना की। उस पादरी ने कहा कि इस बच्चे में 'मॉरल करेज' है, इसमें नैतिक साहस है। रात कह रही है सो जाओ, ठंड कह रही है सो जाओ, थकान कह रही है सो जाओ। २९ लड़के कंबलों के भीतर हो गए हैं और एक लड़का बैठकर रात की आखिरी प्रार्थना कर रहा है।

महीने भर बाद वह वापस लौटा। उसने कहा, नैतिक साहस पर मैंने तुम्हें कुछ सिखाया था। तुम्हें कुछ याद हो तो मुझे तुम कुछ घटना बताओ। एक लड़के ने कहा, मैं भी आपको एक काल्पनिक घटना बताता हूं। आप जैसे ३० पादरी पिकनिक पर गए। दिन भर के थके-मांदे, भूखे-प्यासे वापिस लौटे। २९ पादरी प्रार्थना करने लगे, एक पादरी कंबल ओढ़कर सो गया। तो हम इसको नैतिक साहस कहते हैं। जहां २९ पादरी प्रार्थना कर रहे हों और एक-एक की आंखें कह रही हों कि नर्क जाओगे अगर प्रार्थना न की, वहां एक पादरी कंबल ओढ़कर सो जाता है। लेकिन नैतिक साहस का क्या कुल मतलब इतना ही है कि जो सब कर रहे हों उससे विपरीत करना नैतिक साहस हो जायेगा, सिर्फ विपरीत होना साहस हो जायेगा। **नहीं, विपरीत होने से साहस नहीं हो जाता।**

विपरीत होना जरूरी रूप से सही होना नहीं है। और अक्सर तो यह होता है कि गलत के विपरीत जब कोई होता है तब दूसरी गलती करता है

और कुछ भी नहीं करता। अक्सर दो गलतियों के बीच में वह जगह होती है जहां सही होता है। एक गलती से आदमी पेंडुलम की तरह दूसरी गलती पर चला जाता है। बीच में ठहरना बहुत मुश्किल हो जाता है।

विद्रोह है विवेक और प्रतिक्रिया है अविवेक

मुझे लगता है हिप्पी जिसे विद्रोह कह रहे हैं वह विद्रोह तो है—होना चाहिए वैसा विद्रोह, लेकिन वह प्रतिक्रिया ज्यादा है। और प्रतिक्रिया से मेरा विरोध है। एक रिबेलियस (विद्रोही) आदमी बहुत और तरह का आदमी है। एक विद्रोही आदमी इसलिए 'नहीं' नहीं कहता कि नहीं कहना चाहिये। अगर 'नहीं' कहना चाहिये इसलिए कोई 'नहीं' कहता है तो यह 'हां-हुजूरी' है। इसमें कोई फर्क न हुआ। वह 'नहीं' इसलिए कहता है कि उसे लगता है कि 'नहीं' कहना उचित है। और उसे अगर लगता है कि 'हां' कहना उचित है, तो दस हजार 'नहीं' कहने वालों के बीच में भी वह 'हां' कहेगा, यानी वह सोचेगा। मेरा कहना यह है कि विद्रोह अनिवार्य रूप से विवेक है और प्रतिक्रिया अविवेक है। तो हिप्पी विद्रोह की बात करके प्रतिक्रिया की तरफ चला जाता है। वहां सब बातें व्यर्थ हो जाती हैं।

सहज जीवन क्या है ?

दूसरी बात मैंने कही कि हिप्पी कह रहा है : सहज जीवन। लेकिन सहज जीवन क्या है ? जो मेरे लिए सहज है वह जरूरी नहीं है कि आपके लिए भी सहज हो। जो आपके लिए सहज है, वह मेरे लिये जरूरी नहीं है कि सहज हो। जो एक के लिए जहर हो वह दूसरे के लिये अमृत हो सकता है। असल में एक-एक व्यक्ति का अपना-अपना होने का यही अर्थ है। लेकिन हिप्पी कह रहा है कि सहज जीवन और सहज जीवन के भी नियम बनाये ले रहा है। वह कह रहा है, सहज जीवन यही है, जहां पाखाना किया है उसी के बगल में बैठकर खाना खा लो। हमारे मुल्क ने भी परमहंस पैदा किये हैं। उनका भी सहज जीवन यही था कि पाखाना पड़ा है, वहीं बैठकर खाना खा लेते। लेकिन एक के लिये सहज हो सकता है। और दूसरे के लिए यह बहुत असहज हो सकता है कि पाखाना पड़ा हो और वह खाना खाये।

सहज जीवन का कोई नियम नहीं हो सकता। लेकिन हिप्पियों ने भी नियम बना लिये हैं—कितने लम्बे बाल होना चाहिये, किस काट का कोट होना चाहिये, किस छींट की कमीज होना चाहिये, पेंट की मोरी कितनी सकरी होना चाहिए, जूते कैसे होने चाहिए, चाल कैसी होना चाहिये। गले में हिन्दुस्तान की एक रुद्राक्ष की माला भी होना चाहिये। उसके भी नियम,

उसकी भी सारी व्यवस्था हो गयी है। **असल में आदमी कुछ ऐसा है कि वह व्यवस्था के बाहर हो ही नहीं पाता।** इधर से व्यवस्था तोड़ता है, उधर से व्यवस्था बना लेता है। यहां मैं हिप्पियों से राजी नहीं हूं।

मैं मानता हूं कि एक सहज दुनिया सब तरह के लोगों को स्वीकार करेगी। यानी वह उस आदमी को भी स्वीकार करेगी जिसको हम समझते हों कि सहज नहीं है। लेकिन उसके लिए वह सहज होना हो सकता है। **सबका स्वीकार ही सहजता का आधार बन सकता है।** लेकिन हिप्पी के लिए सब स्वीकार नहीं है। वह दूसरों को ऐसे ही देखता है जैसे कि दूसरे उसको देखते हैं—कंडमनेशन से, निन्दा की नजर से। दूसरे लोगों को वह कहता है, "स्क्वॉयर", चौखटे लोग। वह स्वयं भर स्क्वॉयर नहीं हैं। बाकी जितने लोग हैं वे चौखटे हैं— जो दफ्तर जा रहे हैं, स्कूल में पढ़ा रहे हैं, दुकान कर रहे हैं, पति हैं, पिता हैं। लेकिन किसी के लिए पति होना उतना ही सहज हो सकता है जितना किसी के लिए प्रेमी होना। और किसी के लिये एक ही स्त्री जीवन भर के लिये सहज हो सकती है, जितना किसी अन्य का स्त्री को बदल लेना। लेकिन हिप्पी यदि कहे कि स्त्री का बदलना ही सहज है तब फिर दूसरी अति पर वही भूल शुरू हो गयी। इसलिये मैं इस सूत्र में भी उनसे राजी नहीं हूं। इधर मैं राजी हूं कि प्रत्येक व्यक्ति का अंगीकार होना जरूरी है।

वादों का विरोध भी एक वाद न बन जाय !

और अंतिम बात। जब कोई वादों को भी जानकर और चेष्टा से विरोध करता है तब चाहे वह कितना ही कहे कि वाद नहीं है वाद बनना शुरू हो जाता है। जिसको हम अकविता कहते हैं वह भी कविता ही बन जाती है। जिसको जापान में अ-नाटक (No Drama) कहा जाता है, वह भी ड्रामा है। और जिसको हम अवाद कहते हैं वह भी नये तरह का वाद हो जाता है। असल में मनुष्य जब तक वाद का विरोध भी करेगा तो भी वाद निर्मित हो जायेगा। **अगर अ-वादी किसी को होना है तो उसे तो मौन ही होना पड़ेगा।** उसे वाद के विरोध का भी उपाय नहीं है। इसलिए अ-वादी तो दुनिया में सिर्फ वे ही लोग थे जो चुप ही रह गये, क्योंकि बोले तो डर है वाद न बन जाये। अब नागार्जुन है, वह सारे वादों का खंडन करता है। कोई उससे पूछे कि तुम्हारा वाद क्या है तो वह कहता है, मेरा कोई वाद नहीं है। वह सबका खंडन करता है और उसका अपना कोई वाद नहीं है। लेकिन तब सबका खंडन करना भी वाद बन सकता है।

संतों व रहस्यवादियों द्वारा ही वादों का अतिक्रमण संभव

असल में एन्टी-फिलासफी (दर्शनों का विरोध) भी फिलासफी (दर्शन) ही है। नॉन-फिलासफिक होना बहुत मुश्किल है। एन्टी-फिलासफिक होना बहुत आसान है। दर्शन के विरोध में होने में कठिनाई नहीं है। क्योंकि एक दर्शन फिर विकसित हो जायेगा, जो दर्शन का विरोध करेगा। लेकिन नॉन-फिलासफिक होना—दर्शन के ऊपर चले जाना, बियोंड, पार चले जाना तो सिर्फ मिस्टिक के लिये संभव है, रहस्यवादी के लिये संभव है, संत के लिये संभव है। जो कहता है—सत्य के, सिद्धांत के, वाद के पार, इतना ही नहीं, वह कहता है—बुद्धि के पार, विचार के पार, मन के पार जहां मैं ही नहीं हूं वहां जब सबके पार जो शेष रह जाता है, वही है। लेकिन उसे कहें तो कैसे कहें? अभी हिप्पी वहां नहीं पहुंचा, लेकिन कभी पहुंच सकता है।

प्रतिभाशाली हिप्पियों से ही आशा

फिर हिप्पी बड़ी जमात है। उसमें वर्ग भी हैं। अगर हमें रास्ते में पीत वस्त्रधारी भिक्षु मिल जाये तो उसे देखकर बुद्ध को नहीं तौलना चाहिये। काशी में जो हिप्पी भीख मांग रहा है सड़क पर, उसे देखकर डॉ० तिमोती लियरी को या डॉ० पर्ल्स को नहीं तौलना चाहिये। वे बड़े अद्भुत लोग हैं।

लेकिन सभी वर्ग के लोग इकट्ठे हो जाते हैं। हिप्पियों का एक श्रेष्ठ वर्ग निश्चित ही पार जा रहा है। और इस बात की संभावना है कि पश्चिम में मिस्टिसिज्म का जन्म हिप्पियों का जो श्रेष्ठतम वर्ग है, उससे पैदा होगा। एक नये वैज्ञानिक युग में भी, बुद्धि का आग्रह करने वाले युग में भी बुद्धि से अतीत की ओर इशारा करने वाला एक वर्ग पैदा होगा। लेकिन ये दो चार हिप्पियों की बात है। बाकी जो बड़ा समूह है, वह भीड़-भाड़ है—वह सिर्फ घर से भागे हुए छोकरों का समूह है। कोई पढ़ना नहीं चाहता है, कोई बाप से क्रोध में है। कोई किसी लड़की से विवाह करना चाहता है। कोई गांजा पीना चाहता है, कोई कैसे भी रहना चाहता है। कोई सुबह १० बजे तक सोना चाहता है। इन सारे लोगों का समूह है।

हिप्पियों का पलायन और सांस्कृतिक चुनौतियां

इसलिए मैं दो बातें अन्त में कह दूं। एक यह कि हिप्पी में जो श्रेष्ठतम फूल हैं उनसे तो मुझे आशा बंधती है कि उनसे एक नये तरह के मिस्टिसिज्म, एक नये तरह के रहस्य का जन्म होगा। लेकिन हिप्पियों में जो नीचे का वर्ग है उनसे कोई आशा नहीं बंधती। वे सिर्फ भगोड़े हैं। हिप्पी शब्द भी

'हिप' से ही बनता है अर्थात् पीठ दिखाकर भाग जाने वाले । ऐसे भगोड़े थोड़े दिन में वापिस भी लौट जाते हैं। वे घर लौट जायेंगे ही । इसलिए आपको ३५ साल से ऊपर का हिप्पी मुश्किल से मिलेगा नीचे का ही मिलेगा। अधिकतर तो 'टीन एजर्स' (उन्नीस वर्ष के भीतर) हैं। क्योंकि जैसे ही उनको एक बच्चा हुआ, और प्रेम हो गया एक स्त्री से कि घर बनाने का सवाल शुरू हो जाता है। फिर उन्हें नौकरी चाहिए। फिर वे वापस लौट आते हैं— स्क्वॉयर लोगों की दुनिया में, चौखटे लोगों की दुनिया में वे फिर वापस आ जाते हैं। फिर किसी दफ्तर में नौकरी, फिर घर है, फिर गृहस्थी है, फिर सब चलने लगता है। लेकिन ऐसा मैं जरूर सोचता हूं कि **हिप्पियों ने एक सवाल खड़ा किया है सारी मनुष्य संस्कृति पर और सवाल के उत्तर में भविष्य के लिए बड़े संकेत हो सकते हैं।** इसलिये सोचने योग्य है हमारे लिए बहुत। हिन्दुस्तान तो अभी हिप्पी नहीं पैदा कर सकता है। गरीब कौम हिप्पी पैदा नहीं करती। समृद्धि ही हिप्पी पैदा करती है। गौतम बुद्ध राजा के बेटे हैं। महावीर राजा के बेटे हैं। जैनियों के सब तीर्थंकर राजाओं के बेटे हैं। सब राजाओं के बेटे हैं? जहां सब मिल जाता है वहां से बगावती और आगे जाने वाला आदमी पैदा होता है।

हिप्पी-समृद्ध समाजों की उत्पत्ति

हिप्पी का अभी यहां भारत में सवाल नहीं है। अभी हम हिप्पी भी पैदा करेंगे तो वह सिर्फ बाल बढ़ाने वाला आदमी होगा और कुछ भी नहीं। उसको कहो कि एक आदमी दस हजार रुपये दे रहा है, लड़की की शादी के लिए, तो वह कहेगा, फिर घोड़ा कहां है! गरीब कौम हिप्पी पैदा नहीं कर सकती, समृद्ध कौम ही कर सकती है। असल में इसका मतलब यह हुआ कि "वी केन नॉट अफोर्ड"—यह हमारे लिए मंहगा सौदा है। यह दुःखद है, यह सुखद नहीं है। हम अभी हिप्पी पैदा नहीं कर सकते, यह बड़े दुःख की बात है। हम गरीब हैं बहुत। अभी हम उस जगह नहीं हैं, जहां कि हमारे लड़के कुछ भी न करें, तो भी जी सकें। अगर २ लाख आदमी बिना कुछ किये जी रहे हैं, तो उसका मतलब है कि समाज समृद्ध (एफलुऐंट) है, समाज में बहुत पैसा है। एक हिप्पी है वह दो दिन काम कर आता है गांव में, और महीने भर के लिए कमा लेता है। वह २८ दिन पड़ा रहता है, एक वृक्ष के नीचे ढोल बजाता रहता है। हरि भजन करता रहता है। हरि कीर्तन करता रहता है।

हिप्पी की घटना और भारत की भूमिका

गरीब कौम ऐसा विद्रोह नहीं पैदा कर सकती। लेकिन सदा के लिए तो हम गरीब नहीं रहेंगे। इसलिये जब छात्रों ने आकर कहा कि हिप्पियों पर

कुछ कहें तो मैंने कहा अच्छा है, आज नहीं कल हिप्पी हम भी पैदा करेंगे ही। तो उसके पहले साफ हो जाना चाहिए कि हिप्पी याने क्या ? वैसे इस देश ने अपनी समृद्धि के दिनों में बहुत तरह के हिप्पी पैदा किये, जिनका पश्चिम को कुछ पता नहीं। गिंसबर्ग जब काशी आया तो एक संन्यासी से उसको मिलाने ले गये। उस संन्यासी से जब कहा गया कि गिंसबर्ग हिप्पी है, तो वह संन्यासी खूब हंसा और उसने कहा, तुम तो सिर्फ हिप्पी हो, हम महाहिप्पी हैं, हम काशी वासी हैं। और काशी है नामी महा-हिप्पी भगवान शंकर की भूमि ! शंकर जैसे परम स्वतन्त्र व्यक्तित्व भारत ने कभी पैदा किये थे। लेकिन वह समृद्ध दिनों की पुरानी याददाश्त है।

मनुष्य की चेतना--क्रांति के कगार पर

भविष्य में हम फिर कभी हिप्पी पैदा कर सकते हैं। लेकिन सोचना तो बहुत जरूरी है। और सोच कर यह देखना जरूरी है कि हिप्पियों की इस घटना में क्या मूल्यवान घटित हो रहा है, मनुष्य चेतना के लिए। मनुष्य-चेतना क्रांति के एक कगार पर खड़ी है। और एक निर्णायक छलांग अति निकट है। बाह्य विस्तार अब सार्थक नहीं है। अंतस् विस्तार की खोज बेचैनी से चल रही है। अनेक आयामों में आदमी स्वयं की भावी चेतना को खोज रहा है। सुबह होने के पहले अंधेरा भी निश्चय ही गहन हो गया है—लेकिन उससे स्वर्ण-प्रभात की योजना भी मिल रही है।

- **दूसरे को चाहे सुख दो, चाहे दुख दो, हर हालत में दुख ही पहुंचता है। देने की सब आकांक्षाएं व्यर्थ हो जाती हैं, क्योंकि दूसरे को सुख दिया नहीं जा सकता; सुख सिर्फ स्वयं को दिया जाता है। जिस दिन आप आप नहीं रह जाते, दूसरा दूसरा नहीं रह जाता, उस दिन ही आपकी तरफ मुझसे सुख बह सकता है। और जब तक आपको सुख देने की कोशिश मैं करता हूं तब तक दुःख ही देता हूं, लेकिन हमें खयाल में नहीं आता।**
- **'मैं' और 'तू' के गिर जाने से जो शेष रह जाता है वह अहिंसा है। जब तक हम कह सकते हैं 'तू', तब तक हिंसा जारी रहेगी।**
- **अपने को ही न जानना हिंसा है।**

गीत

खाली कागज छोड़ दिया है लिखकर अपना नाम !
जो-जो पाती लिखी, आ गई चल-फिर अपने धाम !!

[१]

छान लिया हर पत्ता-पत्ता देख लिया हर ढंग
और नहीं था कोई दूजा सब में अपना रंग
मैं ही था सब ओर सब कही मैं था सुबहो-शाम !
अपने को कुछ और लिखूं क्या केवल लिखा प्रणाम !!

[२]

साँस-साँस में जिसे पुकारा और न कोई कन्त
जब-जब देखा अपने अन्दर पाया प्रेम-बसन्त
बहुत मधुर हैं, बहुत सरस हैं उसके सारे काम !
जिसको भेजूं लिख-लिख पाती कितना वह अभिराम !!

[३]

वह विचार से परे, तर्क में करता नहीं निवास
वह अनुभव का गीत शब्द-सुमनों से रहित सुवास
कितनी बार उसे देखा है अपने निकट ललाम !
अब उसको पा गया स्वयं में दूरी मिटी तमाम !!

—साधु योग प्रीतम
प्राध्यापक, हिन्दी - विभाग,
राज० महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राजस्थान)

संन्यास

देखो जी—

देखो कोई आया...!

कौन आया ?

लिया है आज अवतार

प्रभु रजनीश ने

धन्य हुआ संसार...!

मुख से उनके

वचन सरसते

ज्यों सावन में

मेघ बरसते

ताप का हो संहार...!

दुष्ट - अदुष्ट

धर्मी - अधर्मी

जो भी आया

कहां आया...?

'नीश' के द्वार...!

भूल दुःखों को

हुआ संन्यासी

नये नाम और

नये जन्म को

मिला नया संसार...!

डरते...! सब डरते थे

किससे डरते थे...?

संन्यास नाम से...

क्यों डरते थे...?

हाय !

छूटेगा घरबार...!

डरो न भाई !

सुनो तो भाई !

जीवन के दिन चार...!

संन्यासियों ने

घर तो छोड़ा

कब छोड़ा संसार...!

तुम घर में

घर जग में

अटूट है रिश्ता

तब ! क्या छूटेगा

क्या टूटेगा

क्या कहते हो...?

संन्यास मात्र है—

जड़ता का उपचार...!

के० के० शर्मा, दिल्ली

पावन प्रवाह

संकलन : *संतोष॰ बी॰ गुप्ता*, अमरावती (महा.)

सुबह से सांझ तक सैकड़ों लोगों को मैं एक दूसरे की निंदा में संलग्न देखता हूं। हम सब कितने शीघ्र दूसरों के संबंध में निर्णय लेते हैं ! जबकि किसी के भी सम्बन्ध में निर्णय करने से कठिन और कोई बात नहीं है। शायद परमात्मा के अतिरिक्त किसी का निर्णय करने का कोई भी अधिकारी नहीं, क्योंकि एक व्यक्ति को—एक छोटे से, साधारण से मनुष्य को भी जानने के लिए जिस धैर्य की अपेक्षा है, वह परमात्मा के सिवाय और किस में है ?

क्या हम एक दूसरे को जानते हैं ? वे भी, जो एक दूसरे के बहुत निकट हैं, क्या वे भी एक दूसरे को जानते हैं ?

मित्र, क्या मित्र भी एक दूसरे के लिए अपरिचित और अजनबी ही नही बने रहते हैं ?

लेकिन हम तो अपरिचित को भी जान लेते हैं और निर्णय ले लेते हैं और वह भी कितनी शीघ्रता से !

ऐसी शीघ्रता अत्यन्त कुरूप होती है, लेकिन जो व्यक्ति अन्यों के संबंध में विचार करता रहता है, वह अपने संबंध में विचार करने की बात भूल जाता है। और ऐसी ही शीघ्रता निपट अज्ञान भी है, क्योंकि ज्ञान के साथ होता है—धैर्य, अनंत धैर्य।

जीवन बहुत महत्वपूर्ण है और जो जल्दी अविचारपूर्वक निर्णय लेने के आदी होते हैं, वे उसे जानने से वंचित ही रह जाते हैं।

एक घटना मैंने सुनी है। पहले महायुद्ध के समय की बात है। एक कमाण्डर ने अपने सैनिकों से कहा—"सैनिको ! बहुत खतरनाक कार्य के लिए पांच सैनिक चाहिये। उस कार्य में जीवन के बचने की कोई सम्भावना नहीं है, इसलिए जो स्वेच्छा से जोखिम उठाने को तैयार हों, वे अपनी पंक्ति से दो कदम आगे आ जावें।" वह अपनी बात भी पूरी न कर पाया था कि एक घुड़सवार ने आ कर उसका ध्यान बटा लिया। वह कोई अत्यन्त आवश्यक संदेश देने आया था। संदेश पढ़ने के बाद उसने आंखे सैनिक टुकड़ी की ओर उठाई। उनकी पंक्ति अखण्ड देखकर, वह क्रोध से भर गया। उसकी आंखों से चिनगारियां छूटने लगीं और वह चिल्लाया—"कायरो, नामर्दो ! क्या एक भी मर्द तुम्हारे बीच में नहीं है ?" उसने और भी गालियां उन्हें दीं और दंड देने की धमकी दी। और जब एक सैनिक फुसफुसाया तब ही उसे ज्ञात हुआ कि एक ही नहीं, सारे के सारे सैनिक ही दो कदम आगे बढ़ गये थे !

[**भगवान श्री रजनीश के एक प्रवचन से**]

माथेरान साधना-शिविर

ध्यान के गुह्य आयाम

समीक्षाकार
'आकुल' राजेन्द्र

आचार्य रजनीश को उनके प्रेमी भगवान कहते हैं, आचार्य कहें तो बात समझ में आती है।

इस पर रजनीश जी कहते हैं—"आप प्रासंगिक प्रश्न पूछिये। संदेह नहीं कि *प्रश्न मेरे प्रसंग में है; पर मैं प्रश्न के प्रसंग में नहीं हूँ। यदि लोग मुझे भगवान कहते हैं, तो मैं केवल यह मान सकता हूँ कि वे सब मुझसे प्रेम करते हैं।* भगवान, महात्मा, आचार्य— इन शब्दों का शाब्दिक अर्थ न लें। वे मात्र आत्मिक संबंध -- प्रेम पर बल देते हैं।"

साधना-शिवरों में ध्यान के जिन गुह्य प्रयोगों को आचार्य जी कराते हैं, वे साधना के जगत में अति मौलिक और व्यक्ति की चेतना को अपने अस्तित्व में ले जाने में पूर्णतः सक्षम हैं। बाहर से देखने वाला दर्शक केवल इसे एक अभिनय जान सकता है; लेकिन जो साधक इन प्रयोगों को कर रहे हैं, वे इसके आंतरिक आनंद की अनुभूति से आलोड़ित हैं। उनका मन उन्हें अपने अस्तित्व में छलांग लगाने को प्रेरित करता है।

ध्यान के जो साहसिक प्रयोग आचार्य श्री रजनीश जी आज करा रहे हैं, उन पर अपने विचार स्पष्ट करते हुए श्री ए० एस० रमन (Press Representative : Indian Express) — जिन्होंने अभी पिछले माथेरान साधना-शिविर में प्रेस-रिपोर्टर की तरह भाग लिया था—

इण्डियन एक्सप्रेस के सन्डे स्टेन्डर्ड दिनांक २७ फरवरी '७२ के मेगजीन सेक्शन में माथेरान शिविर पर प्रकाशित रिपोर्ताज के आधार पर एक समीक्षा।

— सम्पादक

कहते हैं कि ये प्रयोग अद्वितीय हैं और साधक को उसके अस्तित्व की गहराई से परिचित कराते हैं।

आचार्य रजनीश सक्रिय एवं प्रचंड ध्यान के सम्बन्ध में कहते हैं--"मैं शांत ध्यान का समर्थक नहीं हूं : वह केवल निद्रा की ओर प्रवृत्त कर सकता है। ***सक्रिय ध्यान में कुछ घटित होता है*** और मैं तो मात्र उत्प्रेरक —'केटलिटिक एजेंट'— का ही कार्य करता हूं।"

आचार्य श्री के द्वारा प्रतिपादित सक्रिय ध्यान की विधि : सीधे ही मनुष्य के अंतर अस्तित्व में छलांग लगाने की विधि है। वे स्पष्ट रूप से सम्मोहन की उपयोगिता को जानते हैं। उनके अनुसार—**ध्यान और कुछ नहीं विपरीत सम्मोहन है**। सक्रिय ध्यान के द्वारा ही विपरीत सम्मोहन में दक्षता प्राप्त हो सकती है। रास्ता वैसा ही है, दिशा में ही मात्र भिन्नता है।

रजनीश जी ने आध्यात्मिक चिंतन को अभिनव वैज्ञानिक आधार दिया है। रूढ़िगत प्राचीन उद्धरणों की अपेक्षा सशक्त तर्क अनूठे एवं प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करते हैं, जिनकी पृष्ठ-भूमि में उनकी आत्मानुभूति होती है।

आचार्य श्री के साधना-शिविरों में जो संन्यासी-साधक आये हैं, वे सभी धर्म और सम्प्रदायों के, विभिन्न समाज एवं वर्गों के, अमीर-गरीब, साधारण एवं बुद्धिजीवी, देशी-विदेशी लोग हैं। उनके अपने-अपने मंतव्य एवं विचार हैं—आचार्य श्री की साधना प्रणाली और जीवन-दर्शन पर। **अधिकांश साधकों का कहना है कि आचार्य श्री ने हमको एक मुक्त आकाश में उड़ा दिया है— जहां अलग-अलग व्यक्ति अपने-अपने मानसिक धरातलों के अनुसार साधना और जीवन की गहराइयों में उतरकर अंतस् की आनन्द-धारा में प्रवेश करता है।**

An Interview

FRAGRANCE OF LIFE

[The impressions on foreigners of Bhagwan Shri Rajneesh's Life-Philosophy, are put in here. This is an interview taken by the Editor from Ma Veet Sandeh of Italy, a devotee & truth seeker, at present 'Sannyasinee' under the blessings of Bhagwan Shri.]

Q.— Why, Ma Veet Sandeh, you have become interested in Religion & yoga ? Generally, the People intend to seek pleasure in life with the worldly affairs by means of wealth, sex, power and social position.

A.— I still can't say that I have become interested in Religion and Yoga, because to me Religion, Yoga and Life itself are one and the same. So, the all I can say, is that thare was a time when I was not really interested in Life, I was just sleeping, and the Living Current had still not touched my feet. Then, a time came when something, within or without, made my feet approach the bank of the River.

At that moment, the encounter happened and 'I' was not more.

Wealth, sex, power and social position are all different combinations of existential energy, canalized in a Ego-like dimension. They are blocks of crystallized energy. Consequently,

because of them and Ego's dictatorship, energy cannot flow.

If a surrender happens, wealth, sex, power and social position, like imprisoned rays of light, do suddenly find their way back to their original source. At that moment, the subject is free or, rather, Freedom itself becomes his authentic being.

Q.— How did you come in contact with Bhagwan Shri Rajneesh ji ?

A.— Time and space details can, of course, be provided. They belong to the outer biography of this writer. But they will never reach the core of the question.

For any irreversible turning in life, a proper time comes, and that time is the only possible one for the turning to happen. So, when my time was ready, the encounter happened, and it couldn't have been significant otherwise.

Q.— What influenced you much in Bhagwan Shri's Philosophy of Life ?

A.— Bhagwan Shree's philosophy of Life can hardly be called a philosophy. Because a philosophy is a crystallization of thoughts, and crystallized thoughts cannot express Life.

Bhagwan Shree's philosophy is, rather, a witnessing and a mirroring of the mystery of Existence. Those who are interested in philosophy will never find a meeting ground for this witnessing to share with Him.

Whether this writer has found it, it is because when she encountered Bhagwan Shree, she was

not more interested in philosophy, rather in meeting the mystery itself.

Q.— Will you kindly say that how for Bhagwan Shri's Philosophy of Life & Yoga will be useful to the humanity at-large particularly in America, Europe & other Western Countries.

A.— The new universal world, which humanity is coming in, needs new keys of understanding, new dimensions of awareness, an inner existential transformation of the grosser matter into subtler units of spiritual energy.

The wheel of existence is turning fast.

The new generation of the Aquarian Age is getting ready to utilize those keys, to open-itself to awareness, to inwardly transform the chemistry of the energetic power wich Reality consists of.

As a pioneer of this momentous, changeless change, Bhagwan Shree Rajneesh is esoterically training groups of disciples, who will train, at their turn, thousands of others for the journey.

The essence of Samkya and Yoga Traditions, as a methodology to reach awareness, is going to be transmitted to humanity at—large, from Centres of inspired activity, which will link up with a permanent Foundation in India, under the direct guidance of Bhagwan Shree Rajneesh.

●

ध्यान और संन्यास

संकलन : *स्वामी योग चिन्मय*

[सप्तम गीता ज्ञान यज्ञ, पूना में दिनांक २६ नवम्बर १९७१ के प्रातःकालीन प्रश्नोत्तर प्रवचन से]

***प्रश्न* : क्या संन्यास ध्यान की गति बढ़ाने में सहायक होता है ?**

भगवान श्री : संन्यास का अर्थ ही यही है कि मैं निर्णय लेता हूं कि अब से मेरे जीवन का केन्द्र ध्यान होगा। और कोई अर्थ ही नहीं है संन्यास का। जीवन का केन्द्र धन नहीं होगा, यश नहीं होगा, संसार नहीं होगा। **जीवन का केन्द्र ध्यान होगा, धर्म होगा, परमात्मा होगा—ऐसे निर्णय का नाम ही संन्यास है।** जीवन के केन्द्र को बदलने की प्रकिया संन्यास है। वह जो जीवन के मंदिर में हमने प्रतिष्ठा कर रखी है—इन्द्रियों की, वासनाओं की, इच्छाओं की, उनकी जगह मुक्ति की, निर्वाण की, प्रभु-मिलन की मूर्ति की प्रतिष्ठा ध्यान है।

तो जो व्यक्ति ध्यान को जीवन के और कामों में एक काम की तरह करता है—चौबीस घंटों में बहुत कुछ करता है, घंटे भर ध्यान भी कर लेता है—निश्चित ही उस व्यक्ति की बजाय जो व्यक्ति अपने चौबीस घंटे के जीवन को ध्यान को समर्पित करता है, चाहे दुकान पर बैठेगा तो ध्यानपूर्वक, चाहे भोजन करेगा तो ध्यानपूर्वक, चाहे बात करेगा किसी के साथ तो ध्यानपूर्वक, रास्ते पर चलेगा तो ध्यानपूर्वक, रात सोने जायेगा तो ध्यानपूर्वक, सुबह बिस्तर से उठेगा तो ध्यानपूर्वक—ऐसे व्यक्ति का अर्थ है संन्यासी—ध्यान को जो अपने चौबीस घंटों पर फैलाने की आकांक्षा से भर गया।

निश्चित ही संन्यास ध्यान के लिये गति देगा। और ध्यान संन्यास के लिये गति देता है। ये संयुक्त घटनायें हैं। और मनुष्य के मन का नियम है कि निर्णय लेते ही मन बदलना शुरू हो जाता है। आपने भीतर एक निर्णय किया कि आप के मन में परिवर्तन होना शुरू हो जाता है। वह निर्णय ही परिवर्तन के लिये Crystallization (समग्रीकरण) बन जाता है।

कभी आपने सोचा है कि बैठे बैठे इतना ही सोचें कि चोरी करनी है तो तत्काल आप दूसरे आदमी हो जाते हैं—तत्काल ! चोरी करनी है इसका निर्णय आपने लिया कि चोरी के लिये जो मदद रूप है वह मन आपको देना

शुरू कर देता है—सुझाव कि क्या करें, क्या न करें, कैसे कानून से बचें, क्या होगा, क्या नहीं होगा! **एक निर्णय मन में बना कि मन उस के पीछे काम करना शुरू कर देता है।** मन आपका गुलाम है। आप जो निर्णय ले लेते हैं, मन उसके लिये सुविधा जुटाना शुरू कर देता है कि अब जब चोरी करनी ही है तो कब करें, कैसे करें, किस प्रकार करें कि फंस न जायं। मन सारा इन्तजाम जुटा देता है।

जैसे ही किसी ने निर्णय लिया कि मैं संन्यास लेता हूं कि मन संन्यास के लिये भी सहायता पहुंचाना शुरू कर देता है। असल में निर्णय न लेनेवाला आदमी ही मन के चक्कर में पड़ता है। **जो आदमी निर्णय लेने की कला सीख जाता है, मन उसका गुलाम हो जाता है।** Indecisiveness of mind—वह जो अनिर्णायात्मक स्थिति है वहीं मन है। Decisiveness, निर्णय की क्षमता ही मन से मुक्ति हो जाती है। वह जो निर्णय है, संकल्प है, बीच में खड़ा हो जाता है, मन उसके पीछे चलेगा। लेकिन जिसके पास कोई निर्णय नहीं है, संकल्प नहीं है, उसके पास सिर्फ मन होता है। और उस मन से हम बहुत पीड़ित और परेशान होते हैं। **संन्यास का निर्णय लेते ही जीवन का रूपांतरण शुरू हो जाता है,** संन्यास के बाद तो होगा ही—निर्णय लेते ही जीवन का रूपांतरण शुरू हो जाता है।

और ध्यान रहे आदमी बहुत अनूठा है। उसका अनूठापन ऐसा है कि कोई अगर आपसे कहे कि दो हजार या दो करोड़ या अरब तारे हैं तो आप बिल्कुल मान लेते हैं। लेकिन अगर किसी दीवाल पर नया पेन्ट किया गया हो और लिखा हो कि ताजा पेन्ट है, छूना मत। तो छूकर देखते ही हैं कि है भी ताजा कि नहीं। जब तक अंगुली खराब न हो जाय तब तक मन नहीं मानता। सूरज को बिना सोचे मान लेते हैं और दीवाल पर पेन्ट नया हो तो छूकर देखने का मन होता है। जितनी दूर की बात हो उतना बिना दिक्कत के आदमी मान लेता है। जितनी पास की बात हो उतनी दिक्कत खड़ी होती है।

संन्यास आपके सर्वाधिक निकट की बात है। उससे निकट की और कोई बात नहीं है। अगर जो विवाह करेंगे तो वह भी दूर की बात है। क्योंकि दूसरा Involved (सम्मिलित) है, आप अकेले नहीं हैं। **संन्यास अकेली घटना है जिसमें आप अकेले ही हैं,** कोई दूसरा Involved नहीं है। बहुत निकट की बात है। उसमें आप बड़ी परेशानी में हैं। उस निर्णय को लेकर बड़ी कठिनाई होती है मन को।

जितनी बड़ी भीड़ हो हम उतना जल्दी निर्णय ले लेते हैं। अगर दस हजार आदमी एक मस्जिद को जलाने जा रहे हैं तो हम बिल्कुल मजे से उसमें चले जाते हैं। यदि दस हजार आदमी मंदिर में आग लगा रहे हैं तो हम बराबर सम्मिलित हो जाते हैं। दस हजार लोग हैं, Responsibility (जिम्मेदारी) फैली हुई है। आप अकेले जिम्मेदार नहीं हैं—दस हजार आदमी साथ हैं। अगर कल बात हुई तो आप कहेंगे कि इतनी बड़ी भीड़ थी, मेरा होना, न होना, बराबर था। नहीं भी होता तो भी मंदिर जलने वाला ही था। मैं तो खड़ा था, चला गया। Responsibility (जिम्मेदारी) मालूम नहीं पड़ती।

लेकिन संन्यास ऐसी घटना है, Only you are responsible, no one else (सिर्फ तुम ही जिम्मेदार हो, और कोई नहीं), इसलिए निर्णय करने में बड़ी मुश्किल होती है। अकेले ही हैं, किसी दूसरे पर जिम्मेदारी टाली नहीं जा सकती। किसी से आप यह नहीं कह सकते कि भीड़ की वजह से, तुम्हारी वजह से, मैं लेता हूं। इसलिए निर्णय को हम टालते चले जाते हैं। **अकेला आदमी जिस दिन निर्णय लेने में समर्थ हो जाता है उसी दिन आत्मा की शक्ति जागनी शुरू होती है,** भीड़ के साथ चलने से कभी कोई आत्मा की शक्ति नहीं जगती।

दूसरी मजे की बात है कि लोग मेरे पास आते हैं, वे कहते हैं कि नब्बे percent (प्रतिशत) तो मेरा मन तैयार है— संन्यास लेने के लिये, दस percent (प्रतिशत) नहीं है, तो जब पूरा हो जायेगा, मेरा सौ प्रतिशत मन, तब मैं संन्यास लूंगा। लेकिन इस आदमी ने कभी विवाह करते समय नहीं सोचा कि सौ प्रतिशत मन तैयार है? चोरी करते वक्त नहीं सोचा कि सौ प्रतिशत मन तैयार है? क्रोध करते वक्त नहीं सोचा कि सौ प्रतिशत मन तैयार है? गाली देते समय नहीं सोचा कि सौ प्रतिशत मन तैयार है? सिर्फ संन्यास के समय यह कहता है कि सौ प्रतिशत मन तैयार होगा तब! अपने को धोखा दे रहा है। यह भली भांति जानता है कि सौ प्रतिशत मन कभी तैयार नहीं होगा। बचाव की सुविधा बनाता है। अगर यही धारणा है कि सौ प्रतिशत मन जब तैयार होगा कि तभी कुछ करेंगे तो ध्यान रखना, आपका सब करना आपको बंद करना पड़ेगा। सौ प्रतिशत मन आपका कभी किसी चीज में तैयार नहीं होता है। लेकिन बाकी सब आदमी जारी रखता है।

और यह भी मजे की बात है कि जब आप तय करते हैं कि नब्बे प्रतिशत मन तो कहता है, दस प्रतिशत अभी नहीं कहता है; तो आपको पता नहीं है कि आप संन्यास नहीं ले रहे हैं तो आप दस प्रतिशत मन के प्रति

निर्णय लेते हैं, नब्बे प्रतिशत को इन्कार करते हैं। असल में न लेने में ऐसा लगता है कि जैसे कोई बात ही नहीं हुई। संन्यास न लेना भी निर्णय है—लेना भी निर्णय है। दस प्रतिशत के पक्ष में निर्णय लेते हैं, नब्बे प्रतिशत को छोड़ देते हैं तो आपकी जिंदगी बहुत दुविधा से भरी जिंदगी हो जायगी। अगर निर्णय लेना है तो इक्यावन प्रतिशत भी हो तो निर्णय ले लेना चाहिये, उन्चास प्रतिशत को छोड़ देना चाहिये। लेकिन हम ऐसे हैं कि अगर हमें एक प्रतिशत भी गलत कोई बात मन कहता है तो निन्यान्नवे को छोड़कर एक प्रतिशत वाला काम कर लेते हैं और निन्यान्नवे प्रतिशत भी कोई ठीक बात मन कहता हो तो एक प्रतिशत वाली बात पर निर्णय लेते हैं।

ऐसा मालूम पड़ता है कि शायद आदमी आनंद चाहता ही नहीं। कहता जरूर है कि आनंद चाहते हैं, शांति चाहते हैं, लेकिन शायद आदमी आनंद चाहता ही नहीं। क्योंकि बातें वह आनंद के चाहने की करता है, लेकिन जो कुछ भी वह करता है उससे दुःख ही मिलता है, उस सबसे दुःख ही मिलता है। उपाय सब दुःख के करता है, बातें आनंद की करता है। और कभी गौर कर नहीं देखता है कि मेरा दुःख, मैं जो कर रहा हूं, उन्हीं उपायों पर निर्भर है।

संन्यास आनन्द का निर्णय है। अब मैं आनन्द चाहता हूं—इतना ही नहीं, आनन्द को पाने के लिये कुछ करूंगा भी। संन्यास इस बात का निर्णय है कि अब मैं सिर्फ आनन्द की चाह ही नहीं करूंगा, उस चाह को पूरा करने के लिये जीवन दाँव पर भी लगाऊंगा। संन्यास इस बात की भी अपने प्रत्यक्ष, अपने सामने घोषणा है कि अब मैं दुःख से बचने की कोशिश ही नहीं करूंगा, दुख जिन-जिन चीजों से पैदा होता है उनको भी छोड़ने का सामर्थ्य, साहस भी जुटाऊंगा।

यह निर्णय लेते ही आप की जिन्दगी नये केन्द्र पर रूपांतरित होती है और स्वभावतः ध्यान फैलना शुरू हो जाता है; क्योंकि ध्यान तो सिर्फ एक विधि है। जिसने भी धर्म की ओर जाना शुरू किया, उसे ध्यान की विधि के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं रह जाता है। लेकिन हम ऐसे लोग हैं कि दौड़ते हैं हम धन की तरफ और ध्यान की विधि को उपाय करना चाहते हैं। बहुत मुश्किल होगा, क्योंकि धन को पाने के लिये ध्यान बाधा बन सकता है, सहयोगी नहीं। क्योंकि धन के पाने के लिए जो जो भी करना पड़ता है, ध्यान जैसे गहरा होगा, उस सबको अड़चनें पड़ने लगेंगी, मुश्किल पड़ने लगेगा।

मुझसे कोई पूछता है कि क्या हम ध्यान कर सकते हैं और रिश्वत भी ले सकते हैं? मैं उनसे कहता हूं कि मजे से रिश्वत लो और ध्यान किये

जाओ। क्योंकि जैसे ही ध्यान का थोड़ा-सा भी बीज टूटेगा, रिश्वत लेना मुश्किल होगा, कठिन होता जायगा और एक घड़ी आयेगी कि पांच रुपये लेते वक्त अमूल्य ध्यान को छोड़ने की क्षमता न रह जायेगी, मुश्किल हो जायेगा।

संन्यास इस बात की घोषणा है जगत के प्रति और अपने प्रति कि मैं अब परमात्मा की तरफ जाने का सचेतन निर्णय लेता हूं। निश्चित ही उस निर्णय को लेने के बाद उस यात्रा में जाने के लिए जो साधन है उसको करना आसान हो जाता है। इधर मैंने देखा है सैकड़ों व्यक्तियों को कि संन्यास लेते ही उनमें रूपांतरण हो जाता है। जब कुछ करेंगे तब की तो बात अलग, निर्णय लेते ही बहुत कुछ बदल जाता है। लेकिन यह लेना भी बहुत कुछ करना है। एक निर्णय पर पहुंचना, एक दांव लगाना, एक साहस जुटाना, एक छलांग की भी तैयारी छलांग है। आधी छलांग तो तैयारी में ही लग जाती है।

तो निश्चित ही ध्यान की गहराई बढ़ेगी संन्यास से। संन्यास की गहराई बढ़ती है ध्यान से। वे अन्योन्य आश्रित हैं।

ध्यान का प्रयोग

दो तीन बातें ध्यान के संबंध में आपको कह दूं। इस ध्यान की प्रक्रिया में तीन चरण हैं। पहले चरण में पंद्रह मिनट तक कीर्तन है। इस कीर्तन में जो मतवाला न हो सके वह भीतर प्रवेश न कर सकेगा। **कीर्तन पागलों का रास्ता है।** लेकिन ऐसा है हिसाब दुनिया का कि जिन्हें हम पागल कहते हैं वह परमात्मा को पा लेते हैं और जिन्हें हम बुद्धिमान कहते हैं वे पत्थर, कंकड़ बटोरते मर जाते हैं। कौन पागल है, अंतिम निर्णय मुश्किल है। लेकिन मैं आपसे कहता हूं कि **परमात्मा के लिये पागल होने में ही भर पागलपन नहीं है, बाकी सब चीजों में भी पागलपन है।** लेकिन यह भी मेरे कहने से साफ न होगा।

तो यह प्रथम पंद्रह मिनट तो उनके लिए हैं जो मस्त हो सकते हैं। और हम सब ऐसे बंधे हुए लोग हैं कि चाहते तो हैं कि मस्त हो जायें, लेकिन पूरे शरीर से ऐसे प्रयत्न करते है कि मस्त न हो जायें। हम अपने पूरे शरीर को कारागृह बनाये हुए हैं; नाच नहीं सकते, कूद नहीं सकते, डोल नहीं सकते। बंधे हुए खड़े हैं। बच्चे इतने आनंदित मालूम पड़ते हैं, इसका कुल कारण इतना है कि बच्चे अपने पूरे शरीर को अपनी मस्ती में पूरी तरह से सम्मिलित करने में समर्थ हैं। लेकिन जैसे-जैसे हमारी समझ—तथाकथित समझ बढ़ती है, हम सब तरह से अपने को रोकने का प्रयत्न करते हैं। तब शरीर

हमारा जो है वह एक लोहे की तरह जकड़न बन जाता है। हम हिल नहीं सकते, नाच नहीं सकते, रो नहीं सकते कि कोई क्या कहेगा। और **कोई क्या कहेगा, इस पर हम पूरा जीवन बरबाद करने को तैयार हैं।**

नहीं, आपको अपने शरीर को भी इस मस्ती में प्रवेश करवाना पड़ेगा। तो पहले पन्द्रह मिनिट में आप मस्त हो सकते हैं और ध्यान रखें कि आप होना शुरू कर देते हैं तो आप हो जायेंगे। आप होना शुरू कर दें तो आप हो जायेंगे। एक दफे आप शरीर को स्वतंत्रता दे दें और कह दें कि ठीक है, मैं फिकर छोड़ता हूं सब संसार की जिसने बांध रखा था। अब तू नाच, आनंदित हो। यह धूप फैली है, यह उसका आकाश है, थोड़ा तू उसमें नाच, अपने को भूल जा।

पन्द्रह मिनट में पायेंगे कि आप किसी लहर पर सवार हो गये हैं और किसी दूर देश की यात्रा पर निकल गए हैं। लेकिन आप अपने को कसके और रोक के और संभाल के खड़े हो गए हैं तो यह नहीं हो सकेगा। यह संभव है। **नृत्य की क्षमता खो दी है हमने।** गीत की कड़ी पर सवार होकर आकाश में उड़ना हम भूल गये हैं। धूप आए तो हम नाच नहीं सकते। चांद आकाश में खड़ा हो तो हम डोल नहीं सकते। वर्षा हो रही हो तो हम उसके नीचे खड़े होकर प्रसन्न नहीं हो सकते। फूल खिलते हों तो हमारे होठों पर हंसी नहीं आती। सब तरह से हम अपने को जकड़े हुए हैं। ऐसे बंधे और मरे हुए आदमी होकर परमात्मा की तरफ हम यात्रा नहीं कर पाते हैं। धर्म जिन्दा लोगों की बात है, मुर्दों की नहीं।

तो पन्द्रह मिनट पागल होने की हिम्मत जुटायें। देखें, शायद रस मिल जाय। और अगर रस मिल जाता है तो फिकर न करें कि दूसरा क्या कहता है। तो **पन्द्रह मिनट मतवाले होकर, मस्त होकर, नाचते हुए, डोलते हुए कीर्तन करना है।** आंख बन्द रखें तो आपको सुविधा होती है। आंख खुली रखने से बाधाएं आती हैं। पत्नि पति की तरफ देखती रहती है कि ज्यादा आगे निकल जायं। पति पत्नी की तरफ देखता रहता कि कहीं उसकी साड़ी का पल्ला तो नहीं गिर गया है? **क्षुद्र के लिए हम सदा विराट को खो देते हैं। फिकर छोड़ें दूसरों की, आप काफी हैं।**

और जगह इतनी बड़ी है कि पास कसकर भी खड़े होने की जरूरत नहीं है। पास कसकर खड़ा रहना भी अपने बचाने का उपाय है। "मैं नाचूं कैसे? क्योंकि चारों तरफ लोग खड़े हैं।" यह बेइमानी है अपने प्रति। जगह काफी बड़ी है, फैल जायं चारों तरफ। इस कंपाउंड में काफी जगह पड़ी है। अपनी जगह बना लें कि आप नाच सकें। बहाने क्यों खोजते हैं? Excuse

क्यों खोजते हैं ? फिर मन में कहेंगे कि फलां आदमी का धक्का लग गया इसलिए गड़बड़ हो गई और खड़े आप पहले से तैयार होकर हैं कि कोई आपको धक्का लगा दे और सब गड़बड़ हो जाय। इतनी जगह फैली है उसमें फैलकर खड़े हो जायं। भीड़ लगाने की क्या जरूरत है। और आंखें बन्द रखें— ध्यान में।

पन्द्रह मिनट कीर्तन चलेगा और जब कीर्तन में लहर पैदा हो जाय, आनन्द की पुलक लग जाय, फिर दूसरे **पन्द्रह मिनट धुन बजती रहेगी। उस पन्द्रह मिनट में व्यक्तिगतरूप से नाचना और कीर्तन करना है।** पहले पन्द्रह मिनट तो सामूहिक रूप से कीर्तन चलेगा। फिर कीर्तन बन्द हो जायेगा, धुन बजती रहेगी। कीर्तन में जो लहर पैदा हुई, ऊर्जा जगी, उस ऊर्जा को अब एकदम नहीं रोक लेना है। अब पन्द्रह मिनिट उसका व्यक्तिगत मजा लें। गायें, कूदें, जो भी मन हो, रोकें नहीं। उसमें भी आदमी कुशल है, अपने को धोखा देने में। वह कहता है, अब कुछ हो ही नहीं रहा है— खड़े हो जायं। वह कहता है कि नाचना आ ही नहीं रहा है तो कैसे नाचें। ये तरकीबें हैं। शरीर तो सदा नाचना चाहता है, मन तो सदा नाचना चाहता है, आत्मा तो सदा लीन होना चाहती है। आयेगा क्यों नहीं, सिर्फ रुकावटें हैं, हमारी ही पैदा की हुई, इससे नहीं आ पाता है। **कौन है आदमी जो गीत नहीं गाना चाहता है ?** कौन है आदमी जो फिर से बचपन में नहीं लौट जाना चाहता है, बालक नहीं होना चाहेगा— उसी निर्दोष मौज में। सबके भीतर वही आकांक्षा है, वही मौज है।

जीसस से किसी ने पूछा—तुम्हारे प्रभु के राज्य में कौन प्रवेश करेगा ? तो जीसस कहते हैं कि वे जो बच्चे की भांति हो जायें। ध्यान रखना कि **इस पहले चरण में बार-बार स्मरण कर लेना कि बूढ़े की भांति तो नहीं कर रहे हैं सब काम ?** बूढ़े हों तो भी कोई फिकर नहीं, यदि बच्चे की भांति हो सकते हों तो। बूढ़ा जितना अच्छा बच्चे की भांति हो सकता है उतना बच्चा कभी नहीं हो सकता है; क्योंकि बूढ़े को अनुभव इतना है कि बाकी सब नासमझी थी, वह सब बचपना था। बच्चे को वह समझ नहीं है। इसलिए कोई बूढ़ा जब बच्चा हो जाता है तो संत पैदा हो जाता है, संत होने का और कोई उपाय नहीं होता। और जब कोई बच्चा बूढ़ा हो जाता है, तो इस जमीन पर सबसे ज्यादा रुग्ण अवस्था पैदा हो जाती है। जब कोई बूढ़ा बच्चा हो जाता है, तो इस जमीन पर सबसे ज्यादा स्वास्थ्य की घटना हो जाती है। लेकिन हम बचपन से बूढ़े होने शुरू हो जाते हैं। तो बूढ़े को बचपन लाना हो तो बहुत कठिन मालूम पड़ता है। लेकिन जरा-सा धक्का और धारा टूट जाती है, जरा-सा पत्थर का हटा लेना और झरना फूट पड़ता है।

पन्द्रह मिनिट सामूहिक कीर्तन और फिर पन्द्रह मिनिट व्यक्तिगत मौज। आंखें बन्द ही रहेंगी, नाच, गीत गाना जारी रहेगा, पर व्यक्तिगत। **फिर पन्द्रह मिनिट के बाद तीस मिनिट के लिए प्रभु के द्वार पर गिर जाना है—उनकी प्रतीक्षा करनी है।** शक्ति जब जग जाती है, यात्रा जब शुरू हो जाती है तब उसके हाथों में अपने को छोड़ देना। **तीस मिनिट प्रतीक्षा, समर्पण के।** उस तीस मिनिट में बहुत कुछ होगा। सारा शरीर दूर पड़ा हुआ दिखाई पड़ने लगेगा। भीतर प्रकाश ही प्रकाश फैल जायेगा। आनन्द की बड़ी गहरी अनुभूति होनी शुरू हो जायेगी। और चारों ओर परमात्मा की मौजूदगी प्रतीत होनी शुरू होगी। उसका चुपचाप भीतर रस लेते रहना। गूंगे के गुड़ की तरह रस लेते रहना है, कि वह प्राणों के पोर-पोर में समा जाय और फैल जाय।

अब हम प्रयोग करेंगे··· दूर-दूर फैल जायं··· कुर्सियों पर बैठकर कुछ न होगा ··फैलें ··दूर-दूर फैल जायं···अपनी चारों ओर जगह बना लें··· ध्यान रखना है कि नाचना है··· कूदना है··· लीन होना है··· अपनी चारों ओर जगह बनालें···

●●

ध्यान में सूक्ष्म शरीर का अलग होना

[इसी क्रम में दिनांक १-१२-१९७१ के प्रश्नोत्तर प्रवचन से]

दो तीन मित्रों ने एक ही सवाल पूछा है कि ध्यान का प्रयोग करते समय जब मैं कहता हूं कि आप अपने शरीर के बाहर निकल जायें, छलांग लगाकर और पीछे लौटकर देखें तो, उन्होंने पूछा है कि यह हमारी समझ में नहीं आता है कि कैसे निकल जायें और कैसे पीछे लौटकर देखें।

जिनको छलांग लग जाती हो उनके लिए तो किसी विधि की जरूरत नहीं है, इसलिए तो मैंने कोई विधि नहीं कही है। क्योंकि कुछ लोग सहज ही बाहर निकल जाते हैं, उनके लिए किसी विधि की जरूरत नहीं है। निकलने का ख्याल ही उन्हें बाहर ले जाता है। जिनको ऐसा न होता हो उनके लिए मैं विधि कहता हूं। लेकिन जिनको होता हो उन्हें विधि करने की जरा भी जरूरत नहीं है। जिन्हें यह न होता हो आसानी से कि वे शरीर से बाहर निकल जायें, वे एक छोटा-सा प्रयोग रात सोते समय घर पर करें, तो एक दो दिन में यह आसान हो जायेगा।

रात सोते समय बिस्तर पर बैठ जायं, अपने दोनों हाथ पैरों पर रख लें, और घुटने तक पैर ठंडे पानी से धो लें। फिर दोनों हाथ घुटनों पर रख लें और ऐसा अनुभव करें कि दोनों हाथों से बिजली की धारा पैरों में प्रवाहित हो रही है। और दोनों हाथों को नीचे की तरफ ले जायें— सात बार पंजों तक ले जायें। बस ऐसा ख्याल करते हुए कि बिजली की धारा हाथ से प्रवाहित हो रही है और पोरों से नीचे उतर रही है, हाथ पैरों के पंजे तक ले जायें और फिर सात बार ऐसा करें। और फिर एक मिनिट तक दोनों हथेलियों से पैर के दोनों पंजों को रगड़ते रहें—नीचे तलुओं को रगड़ते रहें। और अनुभव करें कि बिजली वहां इकट्ठी हो रही हैं।

फिर सीधा लेट जायें, माथे पर जैसा हम प्रयोग कर रहे हैं हाथ को रखकर, फिर बहुत आहिस्ते से, तेजी से नहीं, बहुत आहिस्ता से हाथ को ऊपर-नीचे और दोनों ओर एक मिनिट तक फेरते रहें। फिर दोनों हाथ छोड़ दें और भीतर आंख बन्द करके अनुभव करें कि मेरे पैर कहां हैं, मेरे पैर का पंजा कहां समाप्त हो रहा है। शीघ्र ही आपको अनुभव में आ जायेगा कि आपका पैर इस जगह है। तत्काल दूसरी कल्पना करें कि मेरे पैर छः इंच लंबे हो गये हैं। सिर्फ कल्पना करें कि छः इंच लम्बे हो गये हैं। और आपको फौरन अनुभव में आना शुरू हो जायेगा कि आपके पैर जहां थे वहां से छः इंच लंबे हो गये हैं। **यह जो लंबाई है यह सूक्ष्म शरीर की है।** यह अनुभव में आ जायेगी एक-दो दिन के भीतर। ऐसा तीन-चार बार करें। फिर वापिस लौट आयें अपने पैर के स्थान पर। फिर छः इंच लम्बे पैर को ले जायें। फिर वापिस लौट आयें। फिर पैर को ले जायें। जब पैर आपका लम्बा होने लगे—तब दूसरा प्रयोग छोड़ दें।

आंख बन्द करके अनुभव करें कि सिर कहां है। फिर कल्पना करें कि सिर छः इंच लंबा हो गया। फिर वापिस लौट आयें पुराने स्थान पर। फिर छः इंच ले जायें, फिर वापिस लौट आयें।

जब यह भी आपको अनुभव होने लगे—तब तीसरा प्रयोग इसमें जोड़ दें कि आपका शरीर बड़ा होकर पूरे कमरे में फैल गया है। आपका यह शरीर तो पड़ा रहेगा। **लेकिन सूक्ष्म शरीर की अनन्त संभावनाएं हैं। वह कितना ही बड़ा और कितना ही छोटा हो सकता है।** जब आपका छः इंच सिर ऊपर जाने लगे तो अड़चन न होगी। अब तीसरा प्रयोग जोड़ दें। आंख बन्द रखें और अनुभव करें कि शरीर पूरे कमरे में फैल गया और दीवाल से स्पर्श होने लग गया है। जिस दिन यह हो जाय, उस दिन आप सुबह के

ध्यान में शरीर के बाहर हो जायेंगे--कोई अड़चन न होगी। सहज होता हो उन्हें विधि नहीं करनी है। जिनका न होता हो वे रात को सोते वक्त आज से विधि शुरू कर दें, तो मेरे जाने के पहले सुबह के प्रयोग में वे शरीर के बाहर हो सकेंगे।

ध्यान में द्वैत से अद्वैत की ओर यात्रा

दूसरे मित्र ने पूछा है कि जब ध्यान में प्रकाश का अनुभव होता है तब वह प्रकाश भी तो प्रकृति का ही प्रकाश होगा और दृष्टा तो अलग ही रहेगा। ▶ प्राथमिक रूप से ऐसा ही होगा कि प्रकाश अलग दिखाई पड़ेगा और दृष्टा अलग दिखाई पड़ेगा। लेकिन एक घड़ी ऐसी आती है जब दृष्टा और प्रकाश एक ही हो जाते हैं। **वही घड़ी परम घड़ी है—जब देखनेवाला और दिखाई देने वाला एक ही हो जाता है। या जब दर्शन, दृश्य और दृष्टा तीनों खो जाते हैं—सिर्फ प्रकाश रह जाता है।** पर वह भाषा में कहना कठिन होगा। क्योंकि भाषा में तो जब भी हम कहेंगे तो चीजें दो में टूट जायेंगी, देखने वाला अलग हो जायेगा, दिखाई पड़ने वाली चीज अलग हो जायगी।

तो जब मैं आपको कहूं कि प्रकाश को देखें तो यह बिलकुल प्राथमिक है। धीरे-धीरे देखने वाला और दिखाई पड़ने वाला प्रकाश दो चीजें नहीं रह जातीं। एक ही अनुभव हो जाता है। वहां यह भी अनुभव नहीं चलता है कि मैं प्रकाश को देख रहा हूं। वहां प्रकाश ही रह जाता है। मैं नहीं रह जाता हूं। या मैं ही प्रकाश हो जाता हूं। यह तो लौटकर ध्यान के बाहर आपको पता चलेगा कि मैंने प्रकाश जाना। ध्यान के भीतर धीरे-धीरे अनुभव भी खो जायेगा कि मैंने प्रकाश जाना। यह अनुभव भी बाधा है। लेकिन प्राथमिकरूप से सीढ़ी है।

सीढ़ियां चढ़नी पड़ती हैं और छोड़नी भी पड़ती हैं। अगर कोई कहे कि जिन सीढ़ियों को छोड़ना है उन पर चढ़ें ही क्यों? तो वह नीचे ही रह जायेगा, मंजिल पर नहीं पहुंचेगा। और कोई अगर यह कहे कि जब सीढ़ियां अगर इतनी मेहनत से चढ़ीं तो आखिरी समय इन्हें छोड़ें क्यों? तो वह सीढ़ियों पर रह जायगा—वह भी मंजिल पर नहीं पहुंचेगा।

ध्यान में द्वैत से शुरू करना पड़ता है, क्योंकि हम द्वैत में खड़े हैं और अद्वैत में पहुंचना पड़ता है, क्योंकि वही हमारी मंजिल और वही सत्य है। अन्तिम क्षण में प्रकृति और परमात्मा दो नहीं है। अन्तिम क्षण में संसार और मोक्ष दो नहीं है। अन्तिम क्षण में दो ही नहीं है, दुई और द्वैत नहीं है। लेकिन उस अन्तिम क्षण को अगर पहले से आप से कहा जाय तो खतरे की संभावना है।

परम सत्यों की घोषणा से वैज्ञानिकों को हानि की संभावना

ज़ेन फकीर जापान में निरन्तर कहते रहे हैं कि निर्वाण और संसार एक हैं; पदार्थ और परमात्मा एक है। लेकिन इसका एक दुष्परिणाम भी हुआ है। जो आदमी संसार में खड़े हैं उन्होंने सोचा कि जब संसार और मोक्ष एक ही है तो छोड़ना क्या और बदलना क्या ? जाना कहां ? ठीक है, भोगे चले जाओ। शराब भी परमात्मा है, फिर तो पिये चले जाओ। जब द्वैत है ही नहीं तो हम परमात्मा को ही पी रहे हैं— शराब कहां पी रहे हैं ? फिर जुआ खेल रहे हैं तो हम प्रार्थना ही कर रहे हैं, भेद कहां है ?

यह जो अंतिम वक्तव्य है यह पहले न दिया जाय तो अच्छा। क्योंकि यह अंतिम वक्तव्य उस आदमी को देना जिसे कुछ भी पता नहीं है, खतरे में ले जायेगा। **हम ज्ञान से भी नरक में उतर सकते हैं।** हम इतने अद्भुत लोग हैं कि हम ज्ञान को भी नरक के लिए मार्ग बना सकते हैं। ऐसा हुआ है। ऐसा इस देश में भी हुआ है। वेदान्त के जो चरम सत्य हैं वे सामान्य आदमी के हाथ पड़कर लाभ नहीं पहुंचायेंगे, नुकसान पहुंचायेंगे।

चरम सत्य अनुभव से ही प्रगट होते हैं। उन तक पहुंचने के लिए बहुत से ....बहुत से प्रयोगात्मक सत्य स्वीकार करने पड़ते हैं जो कि सत्य नहीं हैं। लेकिन **सत्य तक पहुंचने में भी कुछ असत्य सहयोगी होते हैं।** यह बहुत कठिन मालूम पड़ेगा, दुनिया में जितने भी धर्म विकसित हुए हैं, उनमें निन्यानवे प्रतिशत कल्पित सत्य है। लेकिन वे कल्पित सत्य इसीलिए हैं ताकि उस एक सत्य तक पहुंचने के लिए रास्ता बन जाय।

हम असत्य में घिरे हुए लोग, असत्य के सहारे ही सत्य की तरफ जा सकते हैं। और इसलिए परम सत्य की जो घोषणा है, वह खतरनाक सिद्ध होती है। क्योंकि समझ में तो आ जाती है बात, लेकिन जब हम प्रयोग करने उतरते हैं तब अड़चन बड़ी होती है। अगर सब एक है तो कुछ भी करने की जरूरत नहीं है। और जब परमात्मा सब जगह व्याप्त है तो कुछ भी करने की जरूरत नहीं है। लेकिन हम जैसे हैं वैसे ही रह जायेंगे फिर। और हम जैसे हैं, उसमें हमें कहीं परमात्मा का कहीं कोई अनुभव नहीं है। **हमें कुछ करना पड़ेगा, ताकि हम बदल जायें।** और वह परम सत्य है कि सभी कुछ परमात्मा है वह हमारी प्रतीति, हमारा अनुभव बन जाये। वह अनुभव अभी नहीं है। द्वैत अनुभव होगा, प्रारंभ में। ध्यान में आनन्द भी अनुभव होगा तो आनन्द अलग मालूम पड़ेगा, आप अलग मालूम पड़ेंगे। परमात्मा की भी जो पहली स्पर्शना होगी, उसमें आप अलग और स्पर्श अलग मालूम पड़ेगा।

अगर हम एक नमक की डली को पानी में डाल दें तो वह डालते ही नहीं घुल जाती है; अलग बनी रहती है, पानी से। लेकिन घुलना शुरू हो गया, पानी के छूते ही घुलना शुरू हो गया। अभी तो अलग है। थोड़ा वक्त लगेगा, थोड़ा पानी के सत्संग में रहने पर धीरे-धीरे गलेगी, गलेगी। पहले तो समझेगी कि मैं अलग हूं, पानी अलग है। फिर धीरे-धीरे गलती जायेगी और वक्त आयेगा कि डली खोजने से नहीं मिलेगी— पानी में सब तरह से फैल गयी होगी। और अब डली और पानी दो नहीं होंगे। और अगर आपको डली को खोजना है तो पानी को चखना पड़ेगा। तो ही पता चलेगा कि वह है छिपी हुई—व्यापक होकर फैलकर। लेकिन प्रथम क्षण में तो नमक की डली पानी से अलग ही रहेगी।

आप भी जब परमात्मा में पहले क्षण उतरेंगे तो आप अलग होंगे, परमात्मा अलग होगा। **लेकिन उतर गये तो अब फिकर न करें परमात्मा आपको जल्दी ही गला लेगा, जल्दी ही आप पिघल जायेंगे और खो जायेंगे।**

ध्यान के संबंध में दो-तीन बातें आप से कह दूं। रोज ध्यान की गति तीव्र होती जाती है। इसलिये कोई भी व्यक्ति जो देखने आ गया हो वह कुर्सियों पर बैठ जायगा। कम्पाउन्ड में, मेरे सामने के इस घेरे में कोई भी व्यक्ति देखने के लिए नहीं रहेगा। लेकिन मैं रोज कहता हूं, फिर भी इस कोने पर कुछ लोग खड़े होकर देखना शुरू कर देते हैं। फिर बीच में उन्हें अलग करवाना भी अशोभन मालूम पड़ता है। उन्हें खुद ही समझ लेना चाहिए। इस कोने पर नियमित रूप से कुछ लोग खड़े होकर देखना जारी रखते हैं, तो आज हमें उन्हें अलग करवाना पड़ेगा। इस कोने पर ऐसे लोग अगर हों तो वे कुर्सियों पर चले जायं। छोटे बच्चों को आप साथ बिठा लेते हैं तो आपको अन्दाज नहीं कि वे बच्चे वहां बैठकर क्या करेंगे। उन बच्चों को हटा दें और कुर्सियों पर बैठा दें। जो भी प्रयोग कर रहे हों वही यहां अन्दर रहें, बाकी के लोग बाहर हो जायं। देखने की मनाई नहीं है, पर कुर्सी पर बैठ जायं और देख लें।

जो लोग कुर्सियों पर बैठे हों और प्रयोग करना चाहते हों वे वहां न बैठे रहें। वह सिर्फ नासमझों के लिए है। जिनको प्रयोग करना हो वे नीचे कम्पाउन्ड में आ जायं। जिनको भी हटना हो, वे एकदम हट जायें और वहां बैठ जायं और संकोच न करें कि कोई क्या कहेगा। आपकी मौजूदगी भी खतरनाक है। आप हट जायें। जिनको प्रयोग करना हो वे कुर्सियां छोड़कर सामने आ जायें। जिनको देखना हो वे कुर्सियों पर चले जायें। देखने वालों

को बातचीत नहीं करनी है—इतना सहयोग दें कि चुपचाप देखते रहें। इतने लोग यहां बैठे रहें, तो उपद्रव का कारण है। जल्दी करें। इसमें भी क्या सोच-विचार करना पड़ता है कि जायं या न जायं ?

दूसरी बात का खयाल रखें कि आपको काफी दूर-दूर फैल जाना है, तभी आप आनन्द से नाच सकेंगे। दूर-दूर फैल जायें। फासले पर हो जायें।

●●

मान नहीं कर पाते !

कैसे करें गुणगान तुम्हारा
हम अबोध अज्ञानी तेरा
मान नहीं कर पाते !

शब्दों से कुछ कह नहिं पाते
और कहे बिन रह नहिं पाते
वह आनन्द दिया है तुमने—
प्रकट करे बिन रह नहिं पाते
तुमने जीवन-धार बदल दी
मस्त बहे हम जाते !

उर-अंतर 'वह' ज्योति जलाई
भटके हुओं को राह बताई
चैन परे नहिं रैन-दिवस अब—
वह उर में प्रभु-प्यास जगाई
जान बसे हो दूर कहीं पर
दूर नहीं रह पाते !

— 'आकुल' राजेन्द्र

[भगवान श्री के बम्बई प्रवास पर प्रेमियों की हृदय-व्यथा के परिप्रेक्ष्य में लिखा गया गीत।]

माउन्ट आबू शिविर—३

(एक यात्रा संस्मरण)

—स्वामी अगेह भारती,
जबलपुर

इस बार आबू शिविर में सम्मिलित होने मा योग सम्बोधि भी चल पा रही हैं, इसका मुझे बड़ा सन्तोष है। जबलपुर स्टेशन हम पहुंचे तो अनेक बेचारे देख-देखकर आपस में काना-फूसी कर रहे हैं एवं हंसते हैं भद्दी तरह। लेकिन जब ट्रेन आई और हम प्रथम श्रेणी के डिब्बे में सवार हुए तो उन हंसने वालों में से कई की हंसी बन्द हो गई। उनके बदले हुए भाव को स्पष्ट पढ़ा जा सकता था। तभी तो 'सी आफ' करने आये रजवन्त भाई ने स्वामी अक्षय सरस्वती से कहा कि लोग कितने गंवार हैं। वही आदमी, वही वस्त्र प्लेट फार्म पर था तो उस पर हंसते थे वही ट्रेन में ऊंची क्लास में बैठा तो भाव बदल गए। शायद मन में धारणा बन रही हो कि लगता है कोई पहुंचा हुआ आदमी है। मैंने कहा, मुझे ठीक से देख लेना हो सकता है वे ही ठीक हों क्योंकि भगवान श्री का कहना है कि पहुंचने में [आत्म-ज्ञान में] क्षण भर भी नहीं लगता और सब कुछ बदल जाता है। और मित्र हंस पड़े।

हम उज्जैन पहुंचे। गाड़ी बदली। अपने डिब्बे में बैठे ट्रेन छूटने की प्रतीक्षा में थे कि एक लड़का गेरुए रंग की बुश शर्ट पहने सीधे डिब्बे में घुसा और पैर छू लिया। मैंने उसे छाती से लगाया। मालूम हुआ वह नागदा की मा योग मीमांसा का लड़का है। वहां कालेज में पढ़ता है। १६ वर्ष का बच्चा है बेचारा मुझ बूढ़े के लिए अंगूर लेकर आया है। ... जब हम नागदा पहुंचे तो मा योग मीमांसा ने खुशी से नाचते हुए दौड़कर हमारा स्वागत किया। और बताया कि स्वामी जी [उनके पति] प्रातः की गाड़ी से आबू जा चुके हैं।

वहां से हम चले तो रास्ते में मेरे सहयात्री स्वामी प्रेम विजय ने कहा, धीरे-धीरे नव-संन्यासी भारत के कोने-कोने में होते जा रहे हैं। मा योग सम्बोधि ने कहा, अभी तो शुरूआत ही है स्वामी जी, आगे-आगे देखिए होता है क्या। हम उनके शायराना वक्तव्य पर हंस पड़े। बड़ौदा पहुंचे तो मा योग विभूति व दिनेश एवं सुशीला मिलीं। दिनेश व सुशीला पहली बार मिले थे।

पत्रों में प्रेम था, परिचय था। दिनेश लिपटकर खूब रोया, इतना जोर-जोर से रोया कि प्लेट फार्म के बहुतेरे मुसाफिर उधर आकृष्ट होने लगे और खासी भीड़ लग गई। जब उसने छोड़ा तो सुशीला ने भी रोया-गाया। सुशीला की परीक्षा चल रही थी अतः वह वहीं रुकने वाली थी। ये दोनों चलने को थे। रास्ते में दिनेश ने बताया कि वह संन्यास लेने चल रहा है। सुशीला संन्यास के पक्ष में नहीं है। बड़ौदा में मैं कुर्सी पर बैठा था सुशीला ने मेरे घुटने पर सिर रखकर रोया था। मैं बहुत द्रवित था। अतः मैंने दिनेश को कहा कि थोड़ा रुक जाओ। धीरे-धीरे सुशीला समझ जायगी तब ले लेना संन्यास। मन से तो संन्यासी हो ही। पर दिनेश ने कहा अब मेरा रुकना संभव नहीं है। उसकी इतनी दृढ़ता देख मैं चुप रह गया और वह आबू में भगवान श्री के साक्ष्य में स्वामी दिनेश भारती हो गया।

हम अहमदाबाद पहुंचे तो भगवान श्री के माता-पिता के दर्शन हुए। और भी बहुतों के। सुबह भगवान श्री को अहमदाबाद में 'रिसीव' करने के विचार से मैंने प्रातः वाली आबू की ट्रेन छोड़ दी। प्लेट फार्म नं० १ पर गुज-रात मेल की प्रतीक्षा करने लगा। प्लेट फार्म पर संन्यासी-संन्यासिनियों का पूरा मेला लगा था। तभी गुजरात मेल आई। भगवान श्री अपने वातानुकूल डिब्बे के दरवाजे पर मुस्काते खड़े दिखे। ट्रेन रुकी। भगवान श्री धीरे से बाहर निकले। खुशी में किसी के आंसू छलक पड़े, किसी ने धीमे से पैरों का स्पर्श किया, कोई अपार गहराई वाली उस छाती से जा लगा जिसमें सब कुछ समा जाता है और कोई हलचल नहीं होती। भगवान श्री ने पूछा : शिव, आ गए! मैंने 'हां' कहा और भीतर ही भीतर पिघला। इस बार मैंने अनुभव किया कि सभी प्रेमी शायद चौथे चरण में पहुंच रहे हैं क्योंकि भगवान श्री का स्वागत बड़ी शांति से हुआ। लोग नाचे नहीं, कीर्तन नहीं किए जैसा कि पहले करते थे। अब लोगों के शरीर नहीं, हृदय नृत्य में थे, चेहरों पर संगीत था।

अब हम माउण्ट आबू की उस भूमि पर पहुंचे जहां भगवान श्री के चरण तीसरी बार पड़ रहे थे। इस बार टेण्टों की संख्या अधिक है। हम टेण्ट में ही ठहरे। वहां जबलपुर के स्वामी आनंद विजय, उर्मिला जी, स्वामी दयाल भारती व उनकी मां आदि मिले जो कि पहले से ही विराजमान थे।

इस बार शिविर में ५०० शिवरार्थी थे। १६० नये मित्रों ने संन्यास ग्रहण किया। एक दिन अजमेर के व सिरोही के राजा आये थे। दोनों बहुत प्रभावित मालूम पड़ते थे। दोनों अपने-अपने यहां जीवन जागृति केन्द्र की स्थापना कर रहे हैं, शेष सारा आनन्द सदा की भांति। प्रवचन-स्थल पर भग-वान श्री के आगमन पर पागल हो-होकर नाचना, भजन-कीर्तन करना व जाते

समय नाचते हुए उनकी कार को घेर लेना। यहां तक कि जो व्यवस्था कर रहे थे व कार के आगे-आगे नृत्यमग्न लोगों को अलग करते जगह बनाते चलते थे, वे खुद भी अव्यवस्था [अर्थात् नृत्य] करने लग जाते थे। पंजाब के श्री प्रेमसिंह के सितार-वादन व भजन का क्या कहना ! लोगों की आंसुएं झरने लगतीं। लोग ध्यान में चले जाते। श्री प्रेमसिंह भी इस बार संन्यासी हुए।

इस बार भगवान श्री दोनों समय १ घण्टे के लगभग हिन्दी में बोलते व ४५ मिनट तक अंग्रेजी में। तत्पश्चात् लगभग घण्टे भर का ध्यान। अपराह्न में ४ से ५ उनकी उपस्थिति में आधा घण्टे कीर्तन, आधा घण्टा मौन ध्यान। २॥ से ३॥ व्यक्तिगत मुलाकातें। इस तरह सात से साढ़े सात घण्टे तक भगवान श्री हमारे साथ श्रम करते। उनके श्रम का वर्णन करने में मैं असमर्थ हूं। वे एक आसन में बैठे पौने दो घण्टे तक भाषण करते जबकि हम एक घण्टे में पच्चीसों आसन बदलते। बहुतेरे मित्र तो १ घण्टे बाद जब इंगलिश में भगवान श्री बोलने लगते तो उठकर बाहर जाकर देह सीधी कर आते। तत्पश्चात् घण्टे भर के ध्यान में साधक से अधिक श्रम 'सिद्ध' करता हमें ध्यान करवाने में। सच, हम कभी उऋण नहीं हो सकते उनसे। हम होना भी नहीं चाहते। ऐसे व्यक्ति का ऋणी होना सौभाग्य ही है। हालांकि काहे का ऋण ? किसका ऋण ? मैं खुद भी तो उसी का हूं, वही हूं। नहीं पहचानते अपने को तो क्या हुआ। कभी तो पहचानेंगे। उसी ने तो जगा दी है इतनी प्यास ! उसी ने तो भर दी है प्राणों में इतनी आशा !!

भगवान श्री के बारे में अधिक लिखने में मैं असमर्थ हूं। वे लिखने में आते ही नहीं तो मैं क्या करूं ? शिविरों में दिखलाई पड़ने वाली उनकी वह छवि, जिसे स्वामी विजय भारती का केमरा नहीं पकड़ पाता, मेरी लेखनी क्या पकड़ पायेगी। उनके प्रेमियों के बारे में लिखना मुझे आसान पड़ता है। उन्हीं से उनके बारे में किसी के कुछ समझ में आता हो तो आये वर्ना मजबूरी है। उन्हीं के वर्णन से उनकी कोई छवि हृदय में उभरे तो उभरे, वर्ना विवशता है। हालांकि कुछ लोगों को भगवान श्री के सम्बन्ध में लिखना सबसे सरल मालूम पड़ता है। जैसे कि अभी पिछले दिनों जबलपुर से प्रकाशित एक दैनिक समाचार के 'आपस की बातें' शीर्षक स्तम्भ में एक 'शैतान' ने लिखा है कि : "रजनीश जी भगवान हो गये हैं। पता नहीं पुराने जमाने में भगवान दाढ़ी रखते थे या नहीं, कार में चलते थे या नहीं मगर आज के भगवान तो दाढ़ी रखते हैं। कार में चलते हैं। एयर कन्डीशन्ड भवन में रहते हैं......।" मैं सोचता हूं बेचारे शैतान की समझ कितनी ! मेरी करुणा कहती है भगवान श्री से लिखकर पूछ कि बेचारा 'शैतान' भी कभी आदमी हो सकता है या

नहीं ? पर रुक जाता हूं। क्योंकि भगवान श्री लिख देंगे कि कोई भी शैतान नहीं है। सब 'वही' है, अनन्तरूपों में, अनन्त आकारों में। खैर... क्षमा करेंगे विषयांतर हुआ जा रहा है। हां तो, उनके एक प्रेमी थे नीमच में श्री पी० आर० दुबे, एग्रीकल्चर असिस्टैण्ट डाइरेक्टर। मैंने पहली बार उन्हें देखा था। पर धन्य हैं वो। दूसरे दिन उनकी घड़ी गुम गई। चेहरे पर शिकन नहीं आई। तीसरे दिन पत्नी का तार मिला 'कम इमीडियेटली' पर उनके चेहरे पर शिकन नहीं आई। न ही वे गए। ट्रंक करके समाचार ज्ञात करने का प्रयास जरूर किया पर लाइन खराब होने से वह नहीं हो सका। चौथे दिन चादर, लोटा व जाने क्या-क्या गुम गया। पर वे वैसे ही अचल, अडिग व सहज बने रहे। शिविर समाप्ति तक अर्थात् पूरे ६ दिन वे रहे। धैर्य की अद्भुत मिसाल दिखी उनमें। वे संन्यासी भी हुए। करुणानिधि ने नाम दिया स्वामी प्रमोद भारती।

एक अन्य प्रेमी थे नीमच के ही स्वामी आनन्द वेदान्त। वे शिविर से ही कीर्तन मण्डली में सम्मिलित हो गुजरात-भ्रमण पर चले गये और मुझसे कहते गए कि मा योग विभूति (पत्नी) को तुम पत्र लिख देना व समझा देना कि एक-दो माह बाद लौट आऊंगा, घबड़ाने की कोई बात नहीं। स्वामी दिनेश भारती भी दिल्ली की अपनी नौकरी को इस्तीफा भेज दिए और इसी कीर्तन मण्डली में चले गए। यह तीसरी कीर्तन मण्डली है जो भ्रमण पर निकल रही है। इस मण्डली का नेतृत्व स्वामी नरेन्द्र बोधि सत्व करेंगे।

शिविर में शायद सर्वाधिक आनन्द में थे गाडरवारा के स्वामी सुखराज भारती जो भगवान श्री के बचपन के साथी थे। वे नित्य शाम ५-१५ बजे एक चादर बिछाकर कैन्टीन के सामने बैठ जाते और सभी आने वालों (परिचित और अपरिचित) को बड़े आनन्द व प्रेम से मुसकाते हुए कहते—आइए, आइए, क्या चलेगा ? गर्म, ठंडा, मिठाई, नमकीन जिसको जो लेना हो, वे परम प्रेम से खिलवाते। वह चादर अंधेरा होने तक भरी रहती। नये लोग आते और पुराने उठते जाते। उस चादर का नाम पड़ गया जादू की चादर। धन्य है दोस्त ! तुम भगवान श्री के साथी होने लायक ही थे। स्वामी सुखराज भारती ने बताया कि बचपन से भगवान श्री को कुश्ती लड़ने का बड़ा शौक था। मुझसे इनकी कुश्तियां सैकड़ों बार हुई हैं। मैं कभी भी जीता नहीं हूं, पर लड़ता था सदा। तब मुझे क्या मालूम था कि ये कौन हैं !! ये कहते-कहते उनके आंसू छलक आये, मेरे भी। ... उन्होंने बताया कि एक बार जब ये कोई १२ साल के रहे होंगे, पूरी बाढ़ पर आई हुई नदी में कूद गये। मैंने समझा अब इनका बचना मुश्किल है। जिस पागल-सी फुफुबाती घोर भयंकर शोर मचाती नदी को किनारे से देखकर हृदय

कंपित होता है, उसमें ये कूद गये और बीच धारा में चले गये और बहे चले जा रहे हैं। क्या बचेंगे अब ? मैं भयभीत हूं। पर ये कई मील बाद जाकर किनारे लगे। और किनारे पड़े रहे। ऊपर से खूब सारी रेत बिछी जा रही थी। स्वामी सुखराज भारती पूरे ६ दिन आनन्द में पागल नाचते, कूदते, उछलते, रोते व लोगों को लस्सी, फैण्टा, चाय, मिठाई नमकीन कराते रहे।

मा आनन्द मधु की कार्य करने की क्षमता देखकर मैं सदा ही दंग रहा हूं। ... एक दिन कहने लगी मैं तो सोचती थी गांधी जी के बाद फुरसत है पर रजनीश जी ने तो और भी गहरा फंसाया। मैं उस फंसने का आनन्द जानता हूं अतः हंस पड़ा।

इस बार 'ध्यान' के समय जो नग्न होते रहे हों मुझे पता नहीं पर ध्यान के बाद कुएं पर स्नान के समय व अपरान्ह कीर्तन के समय दर्जनों देशी-विदेशी युवा स्त्री-पुरुष, मित्र नग्न ही रहते। मां योग तरु भी धन्य है जो सदा वाणी में रस घोलती-सी श्लोक पढ़ती हैं। वे डाक्टर थीं लगभग दो साल से डिस्पेन्सरी में ताला लगा दिया है। और भी लेडी डाक्टर शिविर में थीं जोकि सब संन्यासी हैं। २६ मार्च को रात्रि प्रवचन के पूर्व सूचना दी गई कि आज पूर्णिमा है। अतः भगवान श्री की इच्छा है कि आज रात्रि त्राटक ध्यान के बजाय नृत्य व भजन-कीर्तन ही होगा। तालियों की गड़गड़ाहट व 'भगवान श्री रजनीश की जय' से आसमान गूंज गया। उस दिन प्रवचन के बाद जब नृत्य व भजन-कीर्तन शुरू हुआ पिघलती शुभ्र चांदनी की छांव में व सामने ही विराजमान महासूर्य की साक्ष्य में तो····· उस दृश्य को क्या कहूं। धन्य है वह घाटी !! कृष्ण की रासलीला पूर्ण थी। मुझे तो प्रतिक्षण लगता था, लगता ही नहीं था सच ही रजनीश जी मेरे साथ नृत्य कर रहे थे। मेरी उंगलियों को बड़े प्यार से थामे थे वो। और मुझे जाने क्या हो गया था। जाने कहां खो गया था। मगर अन्धेर है ! दूसरे दिन कई मित्रों ने बताया रजनीश जी उनके साथ नृत्य-मग्न थे। मैं जल उठा। मगर इस जलन में आनन्द भी कम न था।

'आनन्द-शिला' के लिए फण्ड इकट्ठा करने हेतु सभी प्रान्तों की मीटिंगें हुईं। किसी प्रान्त ने १ लाख किसी ने पचास हजार ऐसा ही सब ने इकट्ठा करने का संकल्प लिया। म० प्र० से स्वामी सुखराज भारती ने १ करोड़ रुपये इकट्ठा करने का बीड़ा उठाया है। एक दिन कहा गया कि इस समय भी जो मित्र आनन्द शिला को जो अनुदान देना चाहें, दे सकते हैं। पांच-सात मिनट के अन्दर ५० हजार रुपये का अनुदान किया मित्रों ने।

इस बार मैं अपने साथ एक झंझट लेकर गया था। 'रजनीश याने प्रेम' नाम से एक यात्रा-संस्मरण की छोटी पुस्तिका छपवा कर। स्वामी आनन्द वेदांत नीमच व मैं बेचने बैठते। वहां बैठकर भी बड़े विचित्र व आनन्द पूर्ण अनुभव हुए। कोई बिना पैसा दिये ही किताब उठा ले जाता। जाते-जाते स्वामी आनन्द वेदांत से कह देता कि मेरे पैसे शिव से ले लेना। वेदान्त जी कहते तुम यहां से हट जाओ वर्ना सब मुफ्त में चली जायगीं। जहां मेरी किताबें इस तरह प्रेम में बटीं वहीं प्रेम में ही कई मित्र कीमत से ज्यादा पैसा भी दे गये। बम्बई की दर्शन बहन व कच्छ की वृद्धा मां मिट्ठा बहन मूल जी कीमत से बहुत ज्यादा देने वालों में ही थी। जो रही सही कमी थी वह शिविर-समाप्ति पर मैं जूनागढ़ गया, तीन माह से अस्वस्थ मां योग मीरा को देखने तो स्वामी आनन्द निर्वाण (डा० एच० पी० शुक्ल) ने पूरी कर दी। बहुतेरे मित्रों ने १०–१०, १५–१५ किताबें खरीदी मित्रों में बांटने को। एक दिन एक बहन मेरा मुंह भी चूम गई। कहने लगी मैंने किताब पढ़ ली है। बहुत 'स्वीट' लिखी है।

इसी शिविर में एक खबर और सुनी जिसे कि लिखना आवश्यक है। वह यह कि स्वामी योग चिन्मय व अमरीका की मा आनन्द प्रेम भगवान श्री की अनुमति लेकर दाम्पत्य जीवन में प्रविष्ट हुए। सब की मंगल कामनाएं। हे रजनीश! तुम धन्य हो!! तुम्हारी हिम्मत धन्य है!!! तुम्हारी सहजता धन्य है!!!! सब के कल्याणकर्त्ता, तुम्हारे चरणों में मेरे प्रणाम।

प्रकाश पुञ्ज

❀ तिजोरी में बन्द होते ही सत्य दम तोड़ देता है और जो शेष बच जाता है वह मौत की दुर्गन्ध होती है। यह सत्य है कि शव-रक्षा की कतिपय प्रविधियां उसे अनंतकाल तक नष्ट होने से बचा सकती हैं; किन्तु 'शव-लेपन' में मुर्दे को जिलाने की ताकत नहीं होती।

❀ सत्य पर किसी का अधिकार नहीं हो सकता। जो धर्म सत्य को अधिकृत कर रखने का दावा करे वह न तो धर्म है और न उसका सत्य जीवन का सत्य है।

❀ वही धर्म आज के मानव की आवश्यकता की पूर्ति कर सकता है जो जीवन के लिए पूर्ण सहारा बन सके।

❀ हम जिसे जीवन की संज्ञा देते हैं वह अत्यन्त गत्यात्मक है, इसलिये इसके सत्य को सूत्रबद्ध कर लेना सत्य की हत्या करना है।

जालंधर	१९, २०, २१, २२, २३ जून	साधु ओमप्रकाश भारती, N K – 175, चरंजीतपुरा, जालंधर
अमृतसर	२५, २६, २७, २८, २९ जून	स्वामी अमृत अद्वैत, फाइन आर्ट प्रेस, प्रताप बाजार, अमृतसर
बटाला	१, २, ३, जुलाई	श्री गुरुदीपसिंह चड्डा, गांव : चट्ठा, Near : बटाला (जि० : गुरदासपुर, पं.)
गुरदासपुर	५, ६, ७, जुलाई	श्री एन० के० भंडारी, ६४३, मंडी गुरदासपुर
पठानकोट	९, १०, ११ जुलाई	—

स्वामी नरेन्द्र बोधि-सत्व संकीर्तन मंडली का गुजरात कार्यक्रम

इसके अलावा, भगवान श्री के आशीष को लेकर अभी पिछले अप्रैल माह से स्वामी नरेन्द्र बोधि सत्व संकीर्त्तन मंडली गुजरात प्रदेश के दौरे पर है। इस मंडली को भी अपने कार्यक्षेत्र में व्यापक सफलता मिल रही है और अटूट उत्साह तथा मानवीय चेतना की गहराई से संन्यासी साधक मित्र भगवान श्री के प्रसाद को वितरित कर रहे हैं। इस संकीर्त्तन मंडली का कार्यक्रम इस प्रकार है :—

स्थान	दिनांक	संयोजक
द्वारका	२९ मई से १ जून ७२ तक	श्री पुष्कर भाई गोकाणी
पोरबंदर	७ जून से ११ जून ७२ तक	—
वेराबल	१४ ,, ,, १६ ,, ,, ,,	श्री मनसुख भाई
जूनागढ़	१८ ,, ,, २० ,, ,, ,,	श्री डा० एच० पी० शुक्ल, जूनागढ़
पालीताणा	२३ ,, ,, २५ ,, ,, ,,	—
महुवा	२७ ,, ,, २८ ,, ,, ,,	—
भावनगर	३० जून से ४ जुलाई '७२ तक	श्री नाथालाल दुबे, भावनगर
अहमदाबाद	६ जुलाई से १० ,, ,, ,,	स्वामी सत्य बोधिसत्व, खाडीया चार रास्ता, अहमदाबाद

ये कौन ??

अरे !
यह किसकी पग-ध्वनि
सुन रहा हूं मैं !
ये कौन हमें प्रभु की प्यास में
सराबोर करने उतरा है
धरती पर !!
ओह !
युगों से नहीं पहचान पाये
कहीं ये रजनीश—
वही कृष्ण··· वही नानक
वही बुद्ध व जीसस ही तो नहीं
जिनके चले जाने पर
हम बार-बार पछताये हैं !!!
सच ही, आज भी वही
एक नया रूप लिए उतरे हैं !
हम पहले की भांति
आज भी, इस अवसर को न खोयें
जिससे हमें पछताना पड़े
अनन्तकाल तक ...!!!!

[इस मुक्त काव्य और मुखपृष्ठ के छायाकार— *स्वामी विजय भारती*, 34/4— डबल स्टोरी, स्टुडियो आलोक छाया, अशोक नगर, नई दिल्ली—१८].

युक्रांद

मई १९७२